प्रबुद्ध

अक्टूबर '७३

भगवान रजनीश-साहित्य

१ ताओ उपनिषद् ४०-००
२ गीता-दर्शन (अध्याय६) ३०-००
३ महावीर मेरी दृष्टि में ३०-००
४ महावीर वाणी भाग १ ३०-००
५ महावीर वाणी भाग २ ३०-००
६ जिन खोजा तिन पाइयां २०-००
७ मैं मृत्यु सिखाता हूं २०-००
८ इशावास्योपनिषद् १५-००
९ निर्वाणोपनिषद् १५-००
१० गीता-दर्शन अध्याय: ७ १२-००
११ प्रेम है द्वार प्रभु का ९-००
१२ घाट भुलाना बाट बिनु ७-००
१३ नव-संन्यास क्या ? ७-००
१४ समुन्द समाना बुंद में ७-००
१५ सूली ऊपर सेज पिया की ७-००
१६ सत्य की पहली किरण ६-००
१७ मैं कहता आंखन देखी ६-००
१८ क्रांति बीज ६-००
१९ अन्तर्वीणा ६-००
२० ढाई आखर प्रेम का ६-००
२१ प्रभु की पगडंडियां ६-००
२२ संभावनाओं की आहट ६-००
२३ संभोग से समाधि की ओर ६-००
२४ प्रेम के फूल ५-००
२५ अस्वीकृति में उठा हाथ ५-००
(भारत-गांधी और मेरी चिंता)
२६ ज्यों की त्यों धरि दीन्हीं चदरिया ५-००
२७ साधना-पथ ५-००
२८ अन्तर्यात्रा ५-००
२९ सत्य की खोज ५-००
३० मिट्टी के दिए ५-००
३१ मुल्ला नसरुद्दीन ५-००
३२ गहरे पानी पैठ ५-००
३३ काम-योग धर्म और गांधी ४ ००
३४ समाजवाद से सावधान ४-००
३५ शून्य के पार ४-००
३६ पथ के प्रदीप ४-००
३७ शांति की खोज ३-५०
३८ मैं कौन हूं ३-००
३९ शून्य की नाव ३-००
(सत्य का सागर शून्य की नाव)
४० नए संकेत २-००
४१ पथ की खोज २-००
(सिंहनाद का नया संस्करण)
४२ अज्ञात की ओर २-००
४३ सत्य के अज्ञात सागर का आमंत्रण २-००
४४ क्रांति की वैज्ञानिक प्रक्रिया १-५०
४५ ज्योतिष : अद्वैत का विज्ञान १-५०
४६ ज्योतिष : अर्थात अध्यात्म १-५०
४७ जनसंख्या विस्फोट : समस्या और समाधान १-५०
४८ ध्यान एक वैज्ञानिक दृष्टि १-५०
४९ प्रगतिशील कौन १-५०
५० प्रेम और विवाह १-५०
५१ विद्रोह क्या है ? १-५०
५२ मेडीसिन और मेडीटेशन १-२५
५३ सारे फासले मिट गए १-२५
५४ अमृत कण १-००
५५ अहिंसा दर्शन १-००
५६ अज्ञात के नए आयाम १-००
५७ धर्म और राजनीति १-००
५८ बिखरे फूल १-००
५९ मन के पार १-००
६० युवक और यौन १-००
६१ कुछ ज्योतिर्मय क्षण १-००
६२ अवधिगत संन्यास ०-३०
६३ क्रांति की नई दिशा : नई बात (नारी और क्रांति) ०-३०
६४ क्रांति के बीच सबसे बड़ी दीवार (भारत के साधु-संत) ०-३५
६५ संस्कृति के निर्माण में सहयोग (जीवन जागृति केन्द्र: क्या, क्यों, कैसे ?) ०-३०

भगवान रजनीश की सृजनात्मक
युग क्रांति दर्शन की मासिक
संकलन पत्रिका

अक्टूबर १९७३

युक्रांद

वर्ष – ५ अंक – ७ : ८

मूल्य एक प्रति : १-०० रु.
„ वार्षिक : १२-०० रु.

एकान्त

अक्टूबर'७३

– मानसेवी सम्पादक मण्डल –
अरविन्द कुमार
सुश्री डा. उर्मिला ★ 'आकुल' राजेन्द्र
आलोक पाण्डे
व्यवस्थापक : स्वामी धर्म सरस्वती

अनुक्रमणिका

जो, जो है, वह अपने आचरण के कारण वैसा है	३	बोध कथाओं से
शून्य के स्वर	४	रामाशीष सिंह
कृष्ण और गीता (प्रवचन)	५	संकलन : अरविन्दकुमार
विराट प्रभु-लीला	१४	स्वामी अगेह भारती
कोई गरीब क्यों, अमीर क्यों ?	२५	स्वामी आनंद मैत्रेय
महावीर मेरी दृष्टि में	३३	संक्षिप्त सं. : 'आकुल' राजेन्द्र
भगवत्ता के क्षणों में	३८	संकलन : मा योग क्रांति
भगवत्ता के आलोक से (संस्मरण)	४४	अरविन्दकुमार
अमृत-पत्र	४६	भगवान श्री के प्रेमियों को पत्र

गीत : काव्य

स्वीकृति	१२	'आकुल' राजेन्द्र

स्वत्वाधिकारी प्रकाशक : अरविन्द कुमार, ७९०, राइट-टाउन, जबलपुर.
मुद्रण : अशेष प्रिंटर्स, ७८१, राइट-टाउन, जबलपुर. ☎ 2957 P.P.

'जो, जो है—वह अपने आचरण के कारण वैसा है !'

स्मरण रहे कि तुम्हारे पास क्या है, उससे नहीं वरन् तुम क्या हो, उससे ही तुम्हारी पहचान है। वही, तुम्हारी संपदा है, वही तुम हो। जो उसे सम्हाल लेता है, वह सब सम्हाल लेता है।

●

एक बूढ़े अन्धे फकीर की कहानी है, जो कि राजपथ के मध्य में खड़ा था और देश के राजा की सवारी निकल रही थी। सबसे पहले वे सैनिक आये जो कि सवारी के आगे मार्ग को निर्विघ्न कर रहे थे। उन्होंने उस बूढ़े को धक्का दिया और कहा : 'मूर्ख, मार्ग से हट ! अन्धे ! दिखता नहीं कि राजा की सवारी आ रही है ?' वह बूढ़ा हंसा और बोला : 'इसी कारण' लेकिन वह उसी जगह खड़ा रहा। और तब घुड़सवार सैनिक आये। उन्होंने कहा : 'मार्ग से हट जाओ सवारी आ रही है।' वह बूढ़ा वहीं खड़ा रहा और बोला : 'इसी कारण'। फिर राजा के मंत्री आये। उन्होंने उस फकीर से कुछ भी नहीं कहा और वे उसे बचा कर अपने घोड़ों को ले गये। वह फकीर पुनः बोला : 'इसी कारण।' और तब राजा की सवारी आई। वह नीचे उतरा और उसने उस बूढ़े के पैर छुए। वह फकीर हंसने लगा और बोला : 'क्या राजा आ गया ? इसी कारण।' फिर सवारी निकल गई लेकिन जिन लोगों ने उस बूढ़े फकीर का हंसना और बार-बार 'इसी कारण' कहना सुना था, उन्होंने उससे उसका कारण पूछा। वह बोला : 'जो जो है, वह अपने आचरण के कारण वैसा है।'

●

'मैं क्या सोचता हूं, क्या बोलता हूं, क्या करता हूं—उस सब ही में 'मैं' प्रगट होता हूं। स्वयं के इन प्रकाशनों को जो सतत देखता और निरीक्षण करता है, वह क्रमशः ऊपर उठता जाता है, क्योंकि कौन है जो कि जानकर भी नीचे रहना चाहता है ?'

●

शून्य • के • स्वर

अनंत गहराइयों में बहता हुआ प्रेम का स्वर ले, प्रकृति का संगीत ले, प्यार और करुणा का प्रदीप ले, सुषमा से सुन्दर, शून्य के संसार में विचरण कर रहा है—शून्य बनकर।

भगवान कहकर धोखा देना, चार अक्षरों में बांध कर सीमित करना, मुझे पसन्द नहीं; क्योंकि जो अनंत हैं—सारे गीत तो उसी के हैं, सारे शब्द तो उसी के हैं और सब उसका है।

जो निःसीम है उससे बचा क्या है ? हम और आप ! जो अभेद्य है वहां कलम कैसे आगे बढ़ेगी...कहां बढ़ेगी.. ? यह भी तो उसी में है।
"क्रांति के अनंत रूप"

उस क्रान्ति के लिए तुम्हारा आह्वान है, जहां अपने लिए जो कुछ भी है उसे त्याग कर न कुछ हो जाना पड़ता है—शून्य हो जाना पड़ता है।

उस अनंत की आवाज है—निद्रा को छोड़ो, स्वप्न से जागो, अपना सब कुछ तोड़ डालो और तुम स्वयं टूट जाओ—भूत से, भविष्य से।

'जो निर्बन्ध है'...'निःसीम है'...'अखण्ड है'.. 'अमिट है'

उसे ही

• *रामाशीष सिंह*
मुजफ्फरपुर, बिहार

कृष्ण और गीता

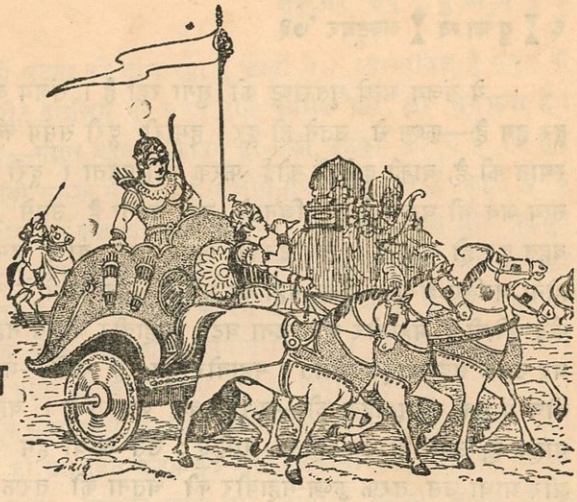

[गीता अध्याय ११ पर भगवान श्री रजनीश जी के ३ जनवरी ७३ से १४ जनवरी ७३ तक—क्रास मैदान, बंबई में १२ प्रवचन हुए हैं। उस क्रम का एक प्रवचन क्रमांक २२वा, श्लोक ८ से ११ के अंश को प्रस्तुत किया गया है। इस क्रम की पहली किश्त पिछले अंक में ली थी।

युक्तांद प्रकाशन का ऐसा प्रयत्न है कि प्रति माह गीता के ११ वें अध्याय का एक-एक प्रवचन दिया जाय, अतः प्रेमी सुविज्ञ साधकों से निवेदन है कि 'युक्तांद' के इन बहुमूल्य अंकों को आप संजो कर रखेंगे तो—वर्ष के अन्त में आपके हाथ में गीता अध्याय ११ पूरा का पूरा हो सकेगा। —सं०]

संजय ने कहा : हे राजन ! महायोगेश्वर और सब पापों के नाश करने वाले भगवान ने इस प्रकार कहकर उसके उपरान्त अर्जुन के लिए परम ऐश्वर्ययुक्त दिव्य स्वरूप दिखलाया।

बड़े मजे की कहानी है और इसमें कई तल सत्य की खबर में विभक्त हो जाते हैं, बंट जाते हैं। घटना घटी कृष्ण के भीतर से अर्जुन के भीतर की तरफ। घटी। को नहीं गई। हुई। हुआ—कि अर्जुन खो गया। उसकी सब पखुड़ियां खुल गईं चेतना की ओर देख सका।

ये संजय अन्धे धृतराष्ट्र को सुना रहा है। संजय बहुत दूर है, जितने दूर हम हैं—कृष्ण से उतने ही दूर। हमारी दूरी समय की है उसकी दूरी स्थान की है, बाकी दूरी में कोई फरक नहीं पड़ता। दूरी थी। बहुत दूरी। सत्य जब भी घटता है तो जिनको सत्य घटता है उनसे समय और स्थान बहुत दूर हो जाते हैं। तब उनकी खबर लाने वाला हमारे बीच में कोई होना चाहिए अन्यथा खबर नहीं आ सकेगी—हम अन्धे के पास खबर आ भी कैसे सकेगी? महावीर को घटना घटी, महावीर बोलते नहीं थे, उनके गणधर उनके संदेशवाहक बोलते। महावीर चुप रह जाते—महावीर और हमारे बीच में एक संदेशवाहक की—गणधर की जरूरत है। वह बीच का संदेशवाहक है, उसमें दो गुण होना चाहिए: उसे आधा हम जैसा होना चाहिए और आधा उस तरफ कृष्ण-महावीर की चेतना की तरफ होना चाहिए। आधा-आधा—बीच में होना चाहिए।

संजय थोड़ी दूर तक अर्जुन जैसा है—थोड़ी दूर तक—पूरा होता तो वो घटना अन्धे धृतराष्ट्र को नहीं सुना सकता। आधा कृष्ण जैसा है—आधा अर्जुन जैसा है। आधा झुका है उस तरफ, उसे चीजें दिखाई पड़ती हैं जो बहुत दूर घट रही हैं, वो पकड़ पाता है। उसके पास दिव्य चक्षु नहीं हैं—क्योंकि दिव्य चक्षु तो पूरी घटना में घटता है वो अर्जुन को घट रहा है। संजय के पास नहीं है। अनेक लोगों को विचारणीय रहा है कि संजय इतनी दूर से कैसे देख सका, उसके पास टैलीपैथिक: सिर्फ दूरदृष्टि, दिव्य दृष्टि नहीं—दूर दृष्टि है। जो अनुभव को उपलब्ध होता है उसे तो दिव्य दृष्टि उपलब्ध होती है, जो अनुभव और गैर-अनुभवों के बीच में खड़ा होता है उसके पास दूर-दृष्टि उपलब्ध होती है। वो देख पा रहा है, दूर की घटना है, बहुत दूर घट रही है पर वो पकड़ पा रहा है और पकड़ वो किसके लिए रहा है: अंधे धृतराष्ट्र के लिए। वो अंधे धृतराष्ट्र को समझा रहा है, इसलिए और कठिनाई है। ध्यान रहे ये जो गीता की भाषा है वह संजय की भाषा है। वो शब्द संजय के हैं। और ये शब्द भी संजय के लिए एक अंधे की समझ में आ सकें इस लिहाज से बोले गए हैं। इसलिए कई तल हैं—घटना का तल है एक तो कृष्ण और फिर दूसरे तल पर निकट में खड़ा हुआ है अर्जुन, फिर बहुत दूरी पर खड़ा हुआ संजय है और फिर अनंत दूरी पर बैठा हुआ अंधा धृतराष्ट्र है। तो गीता ये चार चरणों में चलती है। हम सब धृतराष्ट्र हैं। अंधे—यहां हमें कुछ दिखाई नहीं पड़ता। तो धृतराष्ट्र पूछता है संजय से

और संजय, दूर की घटना को बांध रहा है शब्दों में। स्वाभाविक है संजय के शब्द अधूरे होंगे और इसलिए भी अधूरे होंगे क्योंकि अंधे को समझना है। इसलिए ध्यान रहे—गीता बहुत लोकप्रिय हो सकी उसका कारण है कि हम अंधों की थोड़ी-थोड़ी समझ में आती है। लोग मेरे पास आते हैं कहते हैं कि गीता से ज्यादा लोकप्रिय कुछ भी और क्यों नहीं है? हमारे पास और अद्‌भुत ग्रंथ हैं, बहुत अद्‌भुत ग्रंथ हैं हमारे पास—पर गीता क्यों इतनी लोकप्रिय हो सकी। तो मैं कहता हूं: धृतराष्ट्रों के कारण वो जो अंधे हैं उनकी समझ में आ सके। संजय ने उनके योग्य शब्द उपयोग किए हैं। तो जब तक दुनिया में अंधे हैं तब तक गीता की लोकप्रियता में कोई कमी पड़ने वाली नहीं है। और दुनिया में अंधे सदा रहेंगे, इसलिए लोकप्रियता सदा रहेगी। जिस दिन दुनिया में अन्धे न हों उस दिन संजय की बातें बचकानी मालूम पड़ेंगी या जो अन्धा नहीं रह जाता, जिसकी आंख खुल जाती है, उसको लगता है कि संजय धृतराष्ट्र के लिए बोल रहा है।

संजय के बोलने में कुछ खबर तो है सत्य की लेकिन कुछ असत्य का मिश्रण भी है क्योंकि वो अन्धे की समझ में तभी आ सकेगा। शुद्ध सत्य अन्धे की समझ में नहीं आ सकता। ये मीठा प्रतीक है धृतराष्ट्र का, इसे ख्याल में ले लें। संजय ने कहा: ऐसा कहने के बाद अर्जुन के लिये कृष्ण ने परम ऐश्वर्य युक्त दिव्य स्वरूप दिखाया।

जो पहली बात कही है वह ऐश्वर्य युक्त स्वरूप है। वह भी कृष्ण ने अर्जुन की तैयारी के लिए। क्योंकि परमात्मा के सभी रूप हैं। वो जो विकराल भयंकर कुरूप है, वो भी परमात्मा है। और ये जो सुंदर, ऐश्वर्य-युक्त महिमावान है—वो भी परमात्मा है। इस संबंध में भारतीय दृष्टि को ठीक से समझ लेना जरूरी है। भारत ये नहीं कहता कि कुछ बुरा जो है वो परमात्मा नहीं है। सारी दुनिया में दूसरे धर्म बांट देते हैं जगत को दो हिस्सों में। एक तरफ शैतान को खड़ा कर देते हैं: जो-जो बुरा है वो शैतान की तरफ और जो-जो अच्छा है वो भगवान की तरफ। भगवान उनके लिए अच्छे-अच्छे का जोड़ है। और शैतान बुरे-बुरे का। लेकिन तब वो समझा नहीं पाते कि बुरा क्यों है? और तुम्हारा ये जो अच्छा भगवान है अब तक बुरे को नष्ट क्यों नहीं कर पाया, और अगर अब तक नहीं कर पाया तो कब तक कर पायेगा। और जो अब तक नहीं कर पाया और अनंत काल व्यतीत हो गया तो संदेह पैदा होता है कि वो कभी भी नहीं कर पाएगा। क्योंकि

अब तक कर लिया होता अगर कर सकता होता। नीत्से ने कहा कि जो कुछ भी हो सकता था दुनिया में वो हो चुका होना चाहिए, कितने अनंत काल से दुनिया है—अब क्या आशा रखने की जरूरत है। ठीक कहा। इतने अनंत काल से जगत है कि जो भी होना चाहिए था वो हो चुका होगा, और अगर अब तक नहीं हुआ है तो कभी नहीं होगा। बड़ी कठिनाई है जिन धर्मों ने; जैसे जरथुस्त ने दो हिस्सों में बांट दिया, जीसस ने दो हिस्सों में बांट दिया, मोहम्मद ने दो हिस्सों में बांट दिया। ऐसा मालूम होता है कि इनको भी शायद ये अनुभव के लिए बांटना पड़ा होगा। और शायद उनके पास बड़े मजबूत अन्धे रहे होंगे आसपास। बड़े-अन्धे, वो अद्वैत की भाषा नहीं समझ सकते—ऐसा लगता है कि मोहम्मद के आसपास जो समूह था वो निपट अन्धा समूह रहा होगा, असंस्कृत-खूंखार, मरने और मारने की भाषा उनके समझ में आती होगी। मोहम्मद को जो भाषा बोलना पड़ी है इन धृतराष्ट्रों के लिए, मजबूत धृतराष्ट्रों के लिए। ये जो संजय को धृतराष्ट्र मिले काफी विनम्र रहे होंगे, तैयारी रही होगी तो द्वैत की भाषा बोलना पड़ी। तो जिन धर्मों ने दो में बांट दिया है, उनके लिए बड़ा सवाल खड़ा हो गया है कि बुराई फिर है क्यों? और परमात्मा की बिना अनुमति के अगर बुराई हो सकती है तो जगत में परमात्मा से भी बड़ी ताकत है। और अगर परमात्मा की अनुमति से ही बुराई हो रही है तो फिर परमात्मा को अच्छा कहने का क्या प्रयोजन? भारत ने बड़ी हिम्मत की, भारत ने स्वीकार किया है कि बुरा भी परमात्मा है—भला भी परमात्मा है। भारत ये कहता है कि सारा द्वैत परमात्मा है। उसको दो में हम बांटते हैं—जन्म को हम परमात्मा कहते हैं, मृत्यु को भी। और हम सुख को भी परमात्मा कहते हैं और दुख को भी। और हम सत्य को भी परमात्मा कहते हैं और संसार को भी। ये दो छोर हैं एक के ही। जो उस एक को जान लेता है, उसके लिए ये दो तिरोहित हो जाते हैं। जो उस एक को नहीं जानता—वो उन दो के बीच परेशान होता रहता है। परेशानी इसलिए है कि हम एक को नहीं जानते। परेशानी बुराई के कारण नहीं है, परेशानी इसलिए है कि हम बुराई और भलाई दोनों के बीच जो छिपा है एक उससे हमारी कोई पहचान नहीं है। परेशानी मौत के कारण नहीं है। परेशानी इसलिए है कि जीवन और मौत दोनों में जो छिपा है एक, उससे हमारी कोई पहचान नहीं ह। इसलिए मौत से परेशानी है। पाप से परेशानी नहीं है, पाप से परेशानी इसलिए है कि पाप और पुण्य दोनों

में जो छिपा है : उस एक की हमें कोई झलक नहीं मिलती। पुण्य में नहीं मिलती, तो पाप में कैसे मिलेगी। पुण्य तक में नहीं दिखाई पड़ता वो तो पाप में हमें कैसे दिखाई पड़ेगा। अंधापन है वो हमारा। लेकिन कृष्ण शुरू करते हैं ऐश्वर्य युक्त रूप से—अर्जुन राजी हो गया। पहली दफा आंख खुलती है उस परम में और अगर पहली दफा ही विकराल दिखाई पड़ जाय—कुरूप दिखाई पड़ जाय, पहली दफा ही मृत्यु दिखाई पड़ जाय तो शायद अर्जुन सिकुड़कर वापिस सदा के लिए बंद हो जाय।

जिन लोगों ने भी कभी किन्हीं कारणों से कुछ गलत विधियों से परमात्मा का विकराल रूप देख लिया है, वो अनेक जन्मों के लिए मुश्किल में पड़ जाते हैं। वो रूप है। एक जर्मन विचारक ने एक किताब लिखी है 'द आडिया आफ द होली', उस पवित्रतम का प्रत्यय और उसमें उसने दो रूप कहे हैं। एक उसका प्रीतिकर-सुंदर, एक उसका विकराल-कुरूप-खतरनाक। कोई खतरनाक रूप के पास अगर पहुंच जाता है किन्हीं गलत विधियों के कारण और पहली दफा पर्दा उठते ही उसका विकराल रूप दिखाई पड़ जाता है तो व्यक्ति जन्मों-जन्मों के लिए बन्द हो जाता है। फिर वो दिव्य चक्षु की हिम्मत नहीं जुटा पाता। इसलिए ध्यान रखना, कृष्ण ने जो पहला पर्दा उठाया : वो ऐश्वर्य का, महिमा का, सौंदर्य का, प्रीति का कि अर्जुन डूब जाए, आलिंगन करना चाहे, लीन होना चाहे, एक हो जाना चाहे, ताकि फरार हो जाए। इसलिए जो ठीक-ठीक साधना पद्धतियाँ हैं और गलत साधना पद्धतियां भी हैं, गलत साधना पद्धति से इतना ही मतलब है कि आपको पहुंचा तो देंगी वो लेकिन ऐसे किनारे पर पहुंचा देंगी जहां परमात्मा से भी आपका तालमेल होना मुश्किल हो जाएगा। ठीक साधना पद्धति से इतना ही मतलब है कि वो ठीक सामने के द्वार पर आपको परमात्मा के पास पहुंचायेंगी, जहां मिलन सुखद, प्रीतिकर आनंदपूर्ण होगा। पीछे दूसरा छोर भी देखा जा सकता है। देखना ही पड़ेगा—क्योंकि पूरे को ही जानना होगा, तभी कोई मुक्त होता है। इसलिए गलत और ठीक साधना पद्धति का इतना ही फर्क है कि परमात्मा के किस द्वार से—वहां शंकर तांडव करते हुए भी मौजूद हैं और वहां कृष्ण बांसुरी बजाते हुए भी मौजूद हैं। अच्छा है कि कृष्ण की तरफ से यात्रा करें, शंकर की तरफ से भी यात्रा होती है और कुछ के लिए वही उचित होगी। और कुछ के लिए वही प्रीतिकर होगी, कुछ हैं कि जो शंकर की बारात में ही सम्मिलित होना चाहेंगे। वहां से भी परमात्मा तक पहुंचा

जा सकता है। लेकिन वो जो रूप है अत्यंत विकराल मृत्यु का, अत्यंत दुःस्साहसीयों के लिए—जो मृत्यु में भी छलाँग लगाने को तैयार हैं। आप तो अभी जीवन से भी डरते हैं—डर-डर कर जीते हैं, मृत्यु की तो बात अलग। डर-डर कर तो सभी मरते हैं, डर-डर कर जीते हैं। कंपते रहते हैं और जीते हैं। उनके लिए विकराल के निकट जाना खतरनाक हो जाएगा। इसलिए गीता बहुत व्यवस्था से आगे बढ़ती है।

संजय ने कहा: अर्जुन के लिए परम ऐश्वर्य युक्त, दिव्य स्वरूप दिखाया। और उस अनेक मुख तथा नेत्रों से युक्त, तथा अनेक अद्भुत दर्शनों वाले एवं बहुत-से दिव्य भूषणों से युक्त और बहुत-से दिव्य शस्त्रों को हाथ में उठाए हुए तथा दिव्य माला और वस्त्रों को धारण किए हुए और दिव्य गंध का अनुलेपन किए हुए एवं सब प्रकार के आश्चर्यों से युक्त, सीमा रहित, विराट-स्वरूप, परमदेव परमेश्वर को अर्जुन ने देखा।

ये जितनी बातें वर्णन की गई हैं, ध्यान रखना अर्जुन के लिए यही प्रीतिकर थीं और इसलिए यही परमात्मा का पहला चेहरा था—अर्जुन के लिए। इसमें जितनी चीजें कही गई हैं—ये अर्जुन की ही प्रीति की चीजें हैं। इसे हम फिर से सुन लें तो ख्याल में आ जाएगा। परम ऐश्वर्ययुक्त, ईश्वर का अर्थ होता है मालिक, ऐश्वर्य से भरा हुआ। क्षत्री के लिए ईश्वर जैसा होना, ऐश्वर्य से भर जाना, उसकी पहली वासना है। क्षत्री जीता उसके लिए है, गुलाम होकर क्षत्री मरना पसंद करेगा, मालिक होकर ही जीना पसंद करेगा। ऐश्वर्य उसकी वासना है, उसकी आकांक्षा है, वो ऐश्वर्य की भाषा ही समझ सकता है। वो दूसरी कोई भाषा नहीं समझ सकता। इसलिए पहली जो छवि, पहला जो रूप, आविष्कृत हुआ अर्जुन के सामने, वो था ऐश्वर्य से परिपूर्ण, और ऐश्वर्य में भी जो चीजें गिनाई हैं—वो कई लोगों को लगेंगी, कैसी फिजूल की बातें हैं। खासकर उनको जो त्याग इत्यादि की भाषा सुन-सुनकर परेशान हो गए हैं, उनको बड़ी मुश्किल लगेगी, ये भी क्या बात है।

अनेक मुख तथा नेत्रोंयुक्त, अद्भुत दर्शनों वाले, बहुत से दिव्य भूषणों से युक्त। आभूषण पहने हुए, बहुत से दिव्य शस्त्रों को हाथ में उठाए हुए—वो अर्जुन की प्रीति की चीजें हैं। अगर उसको इस दरवाजे से प्रवेश न मिले तो शायद उसका प्रवेश मुश्किल हो जाय, असंभव हो जाए—कठिन तो हो ही जाए। वो जिन-जिन चीजों से प्रेम करता है—अस्त्र-शस्त्र—वो अर्जुन का

प्रेम है और जब उसने परमात्मा के अनंत-अनंत विराट हाथों में अस्त्र-शस्त्र देखे होंगे, उसका परमात्मा में प्रवेश धीमे-धीमे नहीं हुआ होगा, दौड़ के हो गया होगा—जैसे नदी डूबती है सागर में दौड़ के। दिव्य माला और वस्त्रों को धारण किए हुए—वो भी अर्जुन की प्रीति की चीजें हैं। दिव्य गंध का अनुलेपन किए, सब प्रकार के आश्चर्यों से युक्त, सीमा रहित, विराट-स्वरूप, परमदेव परमेश्वर को अर्जुन ने देखा। अर्जुन मोहित हो गया, स्तब्ध हो गया। इस सौन्दर्य को देखकर विस्मृत हो गया होगा—सब कुछ, इसे देखकर उसकी श्वासें ठहर गई होंगी। इसे देखकर उसके प्राणों में हलचल मच गई होगी। इसे देखकर वो बिल्कुल शून्यवत हो गया होगा। यही उसकी वासना है, यही वो चाहता था। ये उसकी चाह की भाषा है। इसलिए, त्यागवादी परम्परा के लोगों को सुनकर बहुत हैरानी लगती है जो ईश्वर को ऐसी बातें कहते हैं। तो महावीर को जो नग्न पूजते हैं, उनको कृष्ण का सजा हुआ रूप बड़ा अप्रीतिकर लगता है। आभूषणों से भरा हुआ, उनको ऐसा लगता है, ये भी क्या नाटक है। तपस्वी होना चाहिये, ये कृष्ण भी क्या मोर-मुकुट बांधे हुए, हीरे-जवाहरात पहने हुए खड़े हैं। मगर जो कह रहा है: तपस्वी होना चाहिए, वो भी अगर ठीक से समझे तो वही उसकी भी भाषा है, और कृष्ण के प्रीतिकर रूप से उसको भी प्रवेश मिल सकता है। क्योंकि यही उसकी भी चाह है। इस चाह की ही भाषा में पहला अनुभव अर्जुन को हुआ। ध्यान रखना परमात्मा कैसा दिखाई पड़ेगा यह आप पर निर्भर करेगा कि कैसा उसे पहली दफा आप देखेंगे। वो परमात्मा पर निर्भर नहीं करेगा, वो आप पर निर्भर करेगा कि कैसा उसे आप देखेंगे। आप अपनी ही अनुभव की संपदा के द्वार से उसे देखेंगे, आप अपने ही द्वारा उसे देखेंगे। जो पहला रूप आपको दिखाई पड़ेगा, वो परमात्मा का रूप कम, आपकी समझ-भाषा का रूप ज्यादा है। ये अर्जुन की भाषा समझ का रूप है—जो उसे दिखाई पड़ा और धन्यभागी है वो व्यक्ति जिसे अपनी ही भाषा में परमात्मा से मिलना हो जाए, क्योंकि दूसरी भाषा में मिलना हो तो तालमेल नहीं बैठ पाता। कठिन है—शायद द्वार भी बन्द हो जायें।

● संकलन : *अरविन्दकुमार*, जबलपुर

स्वीकृति

●

सुख तो पहले से था अपना
अब दुःख भी मुझे लगे अपना
जब सब मैंने स्वीकार किया !

मेरे अपने तो थे अपने
अब बेगाने भी हैं अपने
अब थाह प्रेम की मिली मुझे
जब बेगानों से प्यार किया !
जब सब मैंने स्वीकार किया !!

लगती थी फूल सुगंध भली
अब शूल चुभन प्यारी लगती
अब द्वार-द्वार आनंद मिले
जब ये उर रहस उतार लिया !
जब सब मैंने स्वीकार किया !!

● *'आकुल' राजेन्द्र*
जबलपुर

माउण्ट आबू ध्यान-योग

शि
वि
र
७३

विराट प्रभु-लीला

धन्य हैं भाग्य उन सब के जो इस समय पृथ्वी नामक इस ग्रह पर किसी न किसी रूप में मौजूद हैं। फिर भले ही उन्हें भगवान श्री रजनीश के होने का पता हो या न हो। क्योंकि भगवान श्री को स्पर्श कर-कर उड़ती हुई हवाएं उनके आनंद को दूर दिग-दिगन्त तक बिखेर रही हैं। और भगवान श्री के चलने-फिरने, उठने-बैठने, बोलने-चुप रहने, उनके हर भाव, हर मुद्रा, हर क्रिया-अक्रिया से निरंतर झर रही तरंगों से तरंगायित हुए बिना किसी के भी बचने का कोई उपाय नहीं है, चाहे कोई जाने, चाहे न जाने।...फिर उनके भाग्य का तो कहना ही क्या, जो न केवल जानते हैं, वरन् निरंतर झरती पावन तरंगों के उस महास्रोत में सीधे ही डुबकी लगाने साधना शिविरों में पहुंच जाते हैं। ''अब तक आप समझ ही गए होंगे कि मैं क्या कहना चाहता हूं। ''जी हां, ठीक पकड़ा आपने। मैं यही कहना चाहता हूं कि मैं बड़ा भाग्यशाली हूं कि ध्यान-योग शिविर-७ में सम्मिलित हो सका। यहीं मां योग सिद्धि व उनके पति (नाम याद नहीं) को प्रणाम करता हूं क्योंकि यदि इन दोनों ने अहमदाबाद प्लेटफार्म पर अपने बैग से निकालकर दवा न दी होती तो शायद मुझे ज्वर के उपचार हेतु एकाध ट्रेन छोड़नी पड़ जाती।

छठें शिविर में मैं नहीं जा पाया था। कुछ झलकियां मित्रों के पत्रों से मिली थीं। अहमदाबाद से स्वामी दयाकृष्ण (मनु) अपने ११ जुलाई के पत्र में लिखते हैं—"दिनांक ८ जुलाई को ६ बजे सुबह से प्लेटफार्म नं० १ पर भगवान श्री की प्रतीक्षा कर रहा था। ७ बजे गुजरात मेल आई और एयर कण्डीशन्ड डिब्बा ठीक हमारे सामने रुका। हमने देखा दूधिया सफेद वस्त्र पहने भगवान श्री दरवाजे के पास आकर खड़े हैं। मैंने शीघ्र ही जाकर उनके पैर छू लिए तथा मुझे इतना आनन्द हुआ कि मैं रोऊं या हसूँ !"

यह करीब-करीब अपढ़ पर अनुभूतियों में समृद्ध संन्यासी आगे लिखता है शिविर के बारे में कि : "भगवान श्री का प्रवचन अंग्रेजी में हो रहा है। अतः अंग्रेजी तो मैं समझ नहीं पा रहा हूं। मगर उनकी जो मुद्राएं व हाव-भाव व प्रवचन का ढंग व शैली मुझे देखने को मिल रही है, वह मैं जिन्दगी में कभी नहीं भूलूंगा।"

शिविर से लौटकर राजकोट से मा योग गीता लिखती हैं—"शिविर से शरीर से तो वापस आ गई हूं पर शक होता है कि वापस आई हूं या नहीं !...शिविर का आनन्द आपको कैसे कहूं !...पर मुझे एक शिकायत हमेशा रहती है कि शिविर समाप्त ही क्यों होता है ?"

सच ही, मैं भी, जब १३ अक्टूबर को पता चला कि आज शिविर का अन्तिम दिन है, छटपटा कर रह गया था कि यह शिविर आखिर इतनी जल्दी क्यों समाप्त हो जाते हैं। ऐसा लगता है पूरे जीवन शिविर चलता रहे।

अब इस शिविर के बाबत कुछ लिखना है। स्वामी योग प्रीतम ने छठें शिविर की झलकियां 'आनंदिनी' मासिक के माध्यम से देते हुए अगेह भारती नामक गधे को बहुत याद किया है कि वह होता तो लिखने का मुश्किल काम उन पर न पड़ता। इस शिविर में भी स्वामी योग प्रीतम का बड़ा प्रेमपूर्ण आग्रह रहा कि मैं शर्तिया लिखूं, लिखना न बन्द करूं, बड़ा बढ़िया लिखता हूं। आदि...आदि। मा आनंद मधु भी कहती थीं : तूने भगवान श्री का जितना गुण गाया है, क्या कोई गाएगा। और भी जाने कौन-कौन क्या क्या। मुझे ये टिप्पणियां प्रीतिकर भी लगतीं पर इन टिप्पणियों को स्वीकार करने का साहस भी न होता। क्योंकि फिर लिखना...। पूरे ९ दिनों का शिविर समाप्त हो गया और मैं क्षण भर को भी लिखने को कहीं प्रेरित नहीं हुआ। असल में 'लिखना' भी 'उत्तेजना' के कारण संभव होता है। 'उबाल' के

कारण। कोई चीज हो, जो भीतर समा न रही हो। और अब मैं देखता हूं कि सब समा जाता है, पच जाता है।

और सच ही, मैं इस बार कतई न लिखता। तनिक भी तो जी न कहता था लिखने का। मगर १४ अक्तूबर '७३ की संध्या, वापसी में, अहमदाबाद प्लेटफार्म पर गुजरात मेल के समय जो भीड़-भाड़ व जो ठेल-ठाल मैंने देखा तो बड़ा क्षुब्ध हुआ। और वही क्षुब्ध होना इस बार मेरे लिखने का हेतु बन रहा है। फिर सोचता हूं जब उतना लिखना ही है, तो थोड़ा-थाड़ा शिविर का समाचार भी लिख दूं। मुफ्त में लोगों से प्रेम मिलता है। अस्तु—

५ अक्तूबर की प्रातः जब मैं आबू रोड स्टेशन से आबू पर्वत के लिए बस द्वारा चलने को था, अचानक ही स्वामी जगतराम जी बस में आकर मुझे कहते हैं कि आप मेरे साथ चलिए जीप में। हम भगवान श्री को 'रिसीव' करेंगे व उनकी गाड़ी के आगे-आगे चलेंगे, पाइलट करते हुए। मैंने कहा, एक मिनट में बताता हूं। और मैंने आंखें बन्द कर लीं। क्योंकि इस बार ९ दिन में एक बार भी भगवान से न मिलूंगा, ऐसा सोचा था। वे इतने मिले हुए से लगते हैं कि अलग से मिलकर उनको क्या कष्ट देना। पर यहां जब देखा कि शिविर-स्थल पहुंचने के पूर्व ही स्वतः मिलने की घड़ी आ पहुंची है, तो तत्क्षण कुछ भी कहने में समर्थ न हुआ। आंखें बन्द कीं। भीतर गया। भीतर ने कहा—मिलते हुए दर्शन को क्यों चूकना, कितना भी मिले हुए लगते हैं, उस शरीर का प्रत्येक स्पर्श, उन आंखों की प्रत्येक चितवन, उन होठों की मुसकान का प्रत्येक दर्शन परम सौभाग्य है। अतः मैंने आंखें खोलीं और स्वामी जी के साथ हो लिया। सामान बस में साथियों के पास छोड़ दिया।

गुजरात - राजस्थान सीमा पर स्वामी जगतराम व मैं जीप के साथ प्रतीक्षा कर रहे हैं। लगभग चालीस मिनट बाद एक कार आती दिखी। लगा कि यही होगी प्रभु जी की गाड़ी। ज्यों-ज्यों गाड़ी पास आती गई, निश्चित सा होता गया कि भगवान श्री की ही गाड़ी है। फिर तो गाड़ी कुछ सौ गज पर रह गई तो भगवान श्री गाड़ी में बैठे स्पष्ट दिखने लगे। गाड़ी और करीब आई। भगवान श्री मुसका रहे हैं। हम दोनों ने प्रणाम किया है। मा योग क्रांति भगवान श्री के बगल बैठी मुसका रही हैं। भगवान श्री मुसकाते हुए पूछते हैं—"शिव, कब आ गए तुम?" अगेह भारती कहता है: "आज ही

सुबह।" हिज होलीनेस कहते हैं—"अच्छा...अच्छा।" "मजे में हो?" "जी हां, खूब।" और क्षण भर बाद हमारी गाड़ियां आबू पर्वत की ओर बढ़ रही हैं। स्वभावत: हमारी सफेद रंग की जीप आगे है। स्वामी जगतराम जी कहते हैं—"यह पाइलट गाड़ी का इन्तजाम कैसा लगा?" अगेह भारती कहते हैं—"बहुत अच्छा।" स्वामी जगतराम जी कहते हैं—"भगवान श्री की गाड़ी का चालक शहर की सड़कों पर गाड़ी चलाने का आदी है। अत: गाड़ी तेज चलाता है। यह पहाड़ी रास्ता बड़ा टेढ़ा-मेढ़ा घुमावदार है। अपनी पाइलट गाड़ी के कारण उसे थोड़ा धीमी गति से चलाना पड़ रहा है।" अगेह भारती: "यह तो बहुत अच्छा है।" स्वामी जगतराम जी ने आबू रोड से आबू पर्वत पर चलने वाले समस्त वाहनों को कह रखा है कि सफेद जीप जब देखना ५ अक्तूबर को तो अपना वाहन चुपचाप किनारे लगाकर खड़ा कर लेना क्योंकि उस जीप के ठीक पीछे भगवान श्री रजनीश की गाड़ी होगी। मैंने देखा कि सचमुच आगे से आता हुआ कोई भी वाहन, हमारी जीप को देखता तो एक किनारे अपने वाहन को लगा लेता। इस तरह भगवान श्री की गाड़ी को कहीं रुकना न पड़ता। स्वामी जगतराम जी का यह प्रबन्ध बहुत प्रशंसनीय था। आबू रोड स्टेशन पर चाय-नाश्ते का मुफ्त प्रबन्ध तीन बार से इनकी ओर से ही रहता है। पूछो तो कहते हैं भगवान श्री की ओर से है।

* * *

इस बार प्रवचन का विषय था 'कठोपनिषद'। प्रवचन हिन्दी में होते थे। हजार से ऊपर शिविरार्थी थे। ३६० मित्रों ने संन्यास ग्रहण किया। स्वामी वैराग्य अमृत एवं उनकी कीर्तन मण्डली ने कितना काम किया है इसका पता सहज ही चलता था बंगाल व बिहार से आए सैकड़ों शिविरार्थियों को देखकर।

* * *

एक सन्ध्या बिहार की एक मां को भगवान श्री के निवास के सामने मैंने चक्कर काटते देखा। पूछा तो उन्होंने बताया कि पति के 'सीरियस' होने का तार आया है। मगर उन्हें शक है कि शायद उनके पति ने झूठ-मूठ के तार किया है। अत: भगवान श्री से पूछना चाहती हैं कि वे वापस चली जायं या शिविर-समाप्ति तक रहें। मा योग क्रांति ने भगवान श्री से पूछकर उन्हें बताया कि शिविर-समाप्ति तक वे रहें। और वे अंतिम दिन तक रहीं।

* * *

जबलपुर के श्री रतन शर्मा (संन्यास का नाम याद नहीं) का आनंद इस रूप में प्रगट हो रहा था कि शिविर के समस्त बच्चों का लगभग नित्य उनके हॉटल में निमन्त्रण रहता। और भोजनोपरान्त कभी 'नक्की झील' में बोटिंग कभी सन सेट प्वाइंट के दर्शन। पूछने पर कहते भगवान् को बोटिंग करा रहा हूं। और मजे की बात यह रहती कि प्रत्येक कार्यक्रम में अर्थात प्रवचन, ध्यान, कीर्तन-ध्यान में सब बच्चे समय से आकर सम्मिलित होते।

इस शिविर की सर्वाधिक आनंदपूर्ण घटना रही भगवान श्री की पिछले जन्म की मां द्वारा संन्यास ग्रहण। नया नाम मिला मा आनंदमयी। पुराना नाम था सुश्री मदन कुंवर पारिख, चंद्रपुर (महाराष्ट्र प्रदेश) की निवासिनी। जिनके लिए भगवान श्री द्वारा लिखे गए १५० पत्र 'क्रांति बीज' नामक पुस्तक में छपे हैं।...सारा जन समूह खड़ा हो गया —जब एनाउंस किया गया कि आज भगवान श्री की पिछले जन्म की मां संन्यस्थ होने जा रही हैं। इतना नृत्य, उत्साह, उछल-कूद हुआ कि मैं बहुत पीछे था—बहुत कूदा कि कुछ देख पाऊं कि भगवान श्री कैसे पैर छूते हैं उस मां के या क्या करते हैं और वह मां क्या करती हैं, पर मैं कुछ भी देख न पाया। जब सामने वालों ने चिल्लाया, भगवान श्री रजनीश की, तो हमने भी दुगुने उत्साह से आवाज लगायी : 'जय'। क्योंकि लगता था सामने वाले देख रहे हैं तो मैंने भी देख ही लिया। पर बाद में मुझे इस बात का स्मरण भी नहीं रहा कि किसी आगे खड़े प्रत्यक्षदर्शी से पूछा होता।

दूसरी आनन्दपूर्ण घटना रही १३ अक्तूबर को कीर्तन के पूर्व मा आनन्द मधु ने घोषित किया कि आज अभी इस स्थल पर स्वामी कृष्ण सरस्वती और मा आनन्द प्रतिमा विवाह के पावन सूत्र में बंधने जा रहे हैं। और मित्रों के ताण्डव नृत्य व कीर्तन के बीच दोनों ने एक दूसरे को पुष्पहार पहनाया। भगवान श्री को टीका किया, चरण छुए और आशीष लिए। भगवान श्री खूब हंसते थे। मुझे भी पहली बार दूसरे के विवाह में इतना सुख अनुभव हुआ। सच ही, रजनीश जी की लीला अपरम्पार है। वे सब कुछ को खेल समझते हैं। हंसी-खेल की तरह ही किसी को ब्याह की स्वीकृति दे देते हैं। किसी के तलाक को। हंसी-खेल की तरह ही किसी को नौकरी करने को कह देते हैं, किसी को नौकरी छोड़ देने को कह देते हैं। कोई प्रेमी मित्र मरता भी है तो सुनकर हंसते ही हैं।

धन्य है भगवन् ! मगर तुमसे ज्यादा धन्य हम हैं जिनको तुम्हारे दर्शन हो रहे हैं, जिनको तुम्हारी लीलाएं देखने को मिल रही हैं।

★ ★ ★

पोरबन्दर की संगीत पार्टी को जितना भी धन्यवाद दिया जाय कम है, क्योंकि वे भी ध्यान में गहरे जाने में बड़े सहयोगी होते थे और स्वयं गहरे ध्यान में चले जाते थे।

पोरबन्दर के स्वामी अनन्त व स्वामी विवेक सागर आदि ने इस बार पुनः अन्नपूर्णा चलाया जहां सैकड़ों मित्र नित्य मुफ्त भोजन ग्रहण करते थे। कई मित्रों ने 'डोनेशन्स' दिए। पर ऐसा पता चला है कि इस बार उन्हें ५०० रुपये का घाटा आया है। पोरबन्दर के इन मित्रों का प्रयास सराहनीय है—इसमें तनिक भी सन्देह नहीं। इनके इस प्रबन्ध व व्यवस्था की चारों ओर सराहना की जा रही थी व की जा रही है। और इनसे भी कोई कुछ कहे या पूछे तो कहते—"भगवान श्री रजनीश की ओर से प्रबन्ध है। हम कौन हैं ? हमारा किया क्या हो सकता था ?"

इस शिविर में मेरे लिए एक महा आनन्द का क्षण गुजरा। और मजा यह कि वह महा आनन्द का क्षण महादुख के बाद आया था। संक्षेप में बात यों है कि एक दिन भगवान श्री से मिलने का समय मैंने लिया था। और मैं समय पर मिलने जा न पाया था। एक महिला ने मुझे ऐसा उलझा लिया था या मैं ही उससे ऐसा उलझ गया बातों में उस क्षण, कि प्रभु से मिलने न जा सका। बाद में मा आनन्द मधु, स्वामी आनन्द बोधिसत्व, मा योग क्रांति ने भी मुझे पूछा कि भगवान श्री प्रतीक्षा करते थे, तुम आये क्यों नहीं ? मैं क्या उत्तर देता ! मैं इसी बात को लेकर बड़ा दुखी था। स्वामी चैतन्य कीर्ति की पत्रिका 'आनंदिनी' के स्टाल के पीछे पड़े-पड़े एक घण्टा हिचकियां ले लेकर रोया, फिर अचानक उठा और जाने कैसी प्रेरणा हुई कि अनजाने ही 'पैलेस' के एक हाल की ओर बढ़ा और जब वहां पहुंचा तो देखता हूं राजकोट के प्यारे दीनू रावल द्वारा तैयार की हुई भगवान श्री की पेन्टिंग्ज। शायद १५ के लगभग रही होंगी पेन्टिंग्ज। सारा कमरा लगता था आलोक से भरा है। मैं जिस चित्र को देखूं उसे ही देखता रह जाऊं। क्या कहूं। भगवान की जिस छवि को देखूं वहीं त्राटक हो जाय। वहां उन चित्रों को देखते-देखते मुझे क्या हुआ, कहा जाना कठिन है। ओह ! दीनू रावल !

तुमने मुझे बहुत आनंदित किया है। तुम्हें मैं प्रणाम करता हूं।

* * *

जब मैं लुधियाना से अनेक मित्रों को शिविरों में आया देखता हूं तो मुझे कपिल व कुसुम याद आते हैं जो दूसरों को भेजने के आदि कारण हैं, और स्वयं नहीं आते। वैसे ही, जब भी, जहां भी कोई कुछ गाता है, मुझे साधु प्रेमसिंह स्मरण आते हैं जिन्होंने अपने भजनों से मुझे लूटा है। और दीनू रावल का चित्र भी अब सदा याद आयेगा, जब भी कभी किसी के द्वारा बनाया गया भगवान श्री का कोई चित्र देखूंगा। और वह प्रेम भी मैं कभी न भूलूंगा जिसे कि लोग बंधन कहते हैं और जिसने कि स्वयं मुझे मुक्त कर दिया है।

* * *

एक प्रसंग और याद आता है जाते समय ट्रेन में। जिस डिब्बे में था उसमें मेरे सिवा एक व्यक्ति ही और थे। वे सज्जन भगवान श्री के बारे में बातें कर रहे थे। वे पहले रजनीश जी के प्रवचन आदि सुनते थे, ध्यान में भी उत्सुक थे। एक शिविर भी अटैण्ड किया है। पर जब से रजनीश जी को उनके भक्तों ने भगवान कहना शुरू किया, तब से वे दूर हो गए। वे सज्जन कोई छोटे-मोटे आदमी नहीं हैं। सरकारी प्रथम श्रेणी अधिकारी हैं। मैंने उनसे कहा: "क्षमा करेंगे, मैं आपसे एक बात पूछना चाहता हूं।" उन्होंने कहा: "पूछिए।" मैंने कहा: "जब उन्हें लोग भगवान नहीं कहते थे तब आप क्या समझकर उनके पास जाते थे? और जब आपने एक साधना-शिविर अटेण्ड किया और उनके निर्देशन में ध्यान के प्रयोग किये तो उन्हें 'रियलाइज्ड' समझते थे या नहीं? और अगर 'रियलाज्ड' समझते थे तो फिर भगवान किसको कहते हैं? योगी कौन है? गीता में कृष्ण ने क्या कहा है?"

वे मेरे इस प्रश्न से इतनी परेशानी अनुभव करने लगे कि सीधा उत्तर देने के बजाय, घुमा-फिराकर दूसरी बातें करना चाहने लगे। मैंने भी उन्हें जबरदस्ती छेड़ने के योग्य न समझा। कितने भी क्लास वन थे तो क्या! क्लास वन पद से क्लास वन बुद्धि का क्या संबंध? फिर वे कहने लगे कि रजनीश जी संन्यासियों की संख्या बढ़ा रहे हैं। मैंने कहा, आप भी शिष्य बनाएं। है एक चपरासी भी शिष्य होने को राजी? मेरे ठेठ प्रश्नों को शायद वे झेल नहीं सके। आंख बन्द किए, और कुछ देर में सो गए। फिर जब जगे तो मैंने खुद उन्हें बात करने का अवसर नहीं दिया। इन सज्जन का स्मरण इसलिए आया

कि इनकी ही तरह बहुत से लोग समझते होंगे कि रजनीश जी संन्यासियों की संख्या बढ़ा रहे हैं। अतः उन सबको एक बात बताना चाहता हूं। वह यह कि इस शिविर में स्वामी अगेह भारती के छोटे भाई रजवन्त सिंह व बड़े पुत्र कुलदीपसिंह संन्यास ग्रहण करने हेतु भगवान श्री के समक्ष उपस्थित हुए, पर भगवान श्री ने दोनों को संन्यास देने के बजाय आदेश दिया : 'अभी ठहरो।' और वे दोनों ठहर गए हैं। जिसे अपना प्रचार करने के लिए संन्यासियों की संख्या बढ़ाना होगा, वह संन्यास लेने के आकांक्षी को ठहर जाने को नहीं कहेगा।

साधु ईश्वर समर्पण इस बार भी कृपा करके दो दिन 'कीर्तन-ध्यान' के बाद भगवान श्री द्वारा बम्बई में दिए गए प्रवचनों के कुछ अनूठे अंश सुनाए, जिसके लिए सब अनुग्रहीत अनुभव कर रहे थे।

एक अपरान्ह भगवान श्री के पास बैठा था। मिलने गया था। एक विदेशी महिला से भगवान श्री बात कर रहे थे। भगवान श्री ने उस महिला को जो कहा उसे स्मरण के अनुसार यहां दे रहा हूं। हो सकता है किसी मित्र के काम आए :—

"जीवन में हर क्षण हमें निर्णय लेना है। निर्णय लेने से बचने का कोई उपाय नहीं है। हम निर्णय नहीं लेंगे, यह भी एक निर्णय है। असल में हर क्षण निर्णय लेने पड़ते हैं जीवन में। निर्णय से बचा नहीं जा सकता। असल बात यह है कि निर्णय जो भी हो, फिर उसके साथ एक हो जाना चाहिए। फिर उस पर अडिग रहना चाहिए। इससे आत्मा विकसित होती है। आत्मा पैदा होती है। सवाल यह नहीं है कि निर्णय क्या हो। निर्णय कुछ भी हो—पर यदि ले लें तो वही हो जायं। संन्यास लेना है, तो फिर संन्यास लेना है। फिर दूसरी बातों का कोई अर्थ नहीं। और यदि संन्यास न लेने का निर्णय लें, तो भी अशुभ नहीं है। लेकिन तब यह न सोचती रह कि संन्यास ले लेती तो अच्छा था...। आदि... आदि। और यह निर्णय तुम्हें स्वयं ही लेना है। दूसरे का निर्णय उपयोगी नहीं है। तू २४ घंटे और सोच समझ ले। कल इतने ही समय आ जा। और जो भी निर्णय ले, फिर उसी के साथ हो जा, फिर वही हो जा।"

महिला धीमे से कुछ पूछती है भगवान श्री से। मैं सुन नहीं पाया। भगवान श्री पुनः कहते हैं : "निर्णय तो तुझे स्वयं ही लेना होगा। वही शुभ है। उसी से आत्मा जन्मेगी। ...हां, जिन्दगी में कभी भी कोई निर्णय लेते समय एक बात का ध्यान

रखना बुद्धिमानी है कि जो निर्णय हम लेते हैं वह किसी नई संभावना का द्वार खोलने वाला है या नहीं। जैसे संन्यास लेने की ही बात है। तूने बिना संन्यासी रह कर २२ साल देख लिए हैं। अब अगर तू संन्यास लेती है तो एक नई संभावना का द्वार खुलता है। बीज के वृक्ष होने की संभावना का द्वार खुलता है। और अगर यह संभावना सफल हो गई तब तो फिर कहना ही क्या! और अगर न भी संन्यास सफल हुआ तो जो तू पहले थी, वह तो बच ही जायेगी। उसमें तो कुछ क्षीण होने का सवाल ही नहीं। अतः बुद्धिमान को सदा संभावना वाला निर्णय लेना चाहिए। क्योंकि उसमें असफल होकर भी जो हम पहले थे वह तो बच ही जाते हैं।"

★ ★ ★

जबलपुर के एक युवा एडवोकेट श्री गयाप्रसाद पटेल पहली बार शिविर गए थे। वे पहली ही बार इतने लुटे कि बस लुटे ही लुटे। उन्होंने अपने आपको पूर्णतया भगवान श्री के कार्य के लिए समर्पित कर दिया। अतः शिविर-समाप्ति पर भगवान श्री उन्हें बम्बई लेते गए। सच, वे सब कितने धन्य हैं जिनका जीवन भगवान श्री के परम पावन कार्य में लग रहा है।

★ ★ ★

भगवान श्री के पूज्य माता-पिता व श्री अरविन्दकुमार तथा स्वामी सुखराज भारती से मेरा विनम्र निवेदन है कि वे हर शिविर में सम्मिलित हुआ करें। क्योंकि उनके न जाने पर उनकी बड़ी मरम्मत होती है जो कि गए रहते हैं। कितने लोग पूछते हैं कि पिता जी क्यों नहीं आए? माता जी क्यों नहीं आईं? अरविन्द जी क्यों नहीं आए? सुखराज जी क्यों नहीं आए? आप अकेले क्यों आए? सच, प्रेमी लोग खासी परेड ले लेते हैं। इस बार इन सब को लिए बिना शिविर आने के लिए तंग करने वालों में थे मा योग गुणा, साधु ईश्वर समर्पण, श्री राम बाबू दुबे, स्वामी दिनेश भारती, स्वामी आनन्द समीर आदि अनेकानेक प्रेमी। आशा है अप्रैल शिविर में ये सब अवश्य जायंगे।

★ ★ ★

एक बड़ी मजेदार बात अक्सर माउण्ट आबू पर देखने को मिलती थी। वह यह कि कोई संन्यासी किसी दूकान पर कोई चीज लेता और दस या सौ का नोट देता तो दूकानदार कहता—'बाद में दे जाइएगा, अभी चेन्ज नहीं है।' ऐसा कई बार कई अलग-अलग दूकानों पर मैंने देखा। यह बात मजेदार लगती थी राजस्थान

सरकार के संदर्भ में। राजस्थान सरकार को भगवान पर भी शायद भरोसा नहीं, और मामूली से दूकानदार को भगवान के भक्तों-प्रेमियों पर भी कितना भरोसा ! कितनी श्रद्धा !! शायद सरकारी तन्त्र से ज्यादा नासमझ जर्मन पर कोई भी नहीं होगा। और कैसा विचित्र दुर्भाग्य है कि समाज का पूरा भविष्य उनकी ही समझ पर आश्रित रहता है !!

★ ★ ★

ग्वालियर की सुश्री लक्ष्मी मिश्र एक दिन अगेह भारती से 'आनंदिनी' पत्रिका की प्रशंसा कर रही थीं। तब मैंने पढ़ा न था। अब पढ़ा हूं। अतः उन तक अपनी सहमति भेजता हूं और स्वामी चैतन्यकीर्ति की सूझबूझ को साधुवाद। श्री प्रेमनाथ गुप्ता व श्री ढल व श्री कपिल आदि को प्रणाम, जो पत्रिका की जड़ें मजबूत करने में लगे हैं।

मा योग विभूति व स्वामी आनंद वेदान्त जहां भी हों सुन लें कि इस बार फिर मेरा रिजर्वेशन भगवान श्री के डिब्बे के बगलवाले डिब्बे में ही छठीं बार हुआ था। बहुत से मित्रों ने अहमदाबाद प्लेटफार्म पर मुझे इस बात का स्मरण भी दिलाया। मैं इस विषय में कोई भी टिप्पणी करने में असमर्थ हूं सिवा इसके कि १४ डिब्बों की गुजरात मेल में दो या तीन वातानुकूल रहते हैं, १० या ११ प्रथम श्रेणी व एक तृतीय श्रेणी। ११ प्रथम श्रेणी डिब्बों में कहीं भी रिजर्वेशन हो सकता है। १५ दिन पूर्व रिजर्वेशन को 'एप्लाई' करना होता है। यह क्यों अपने आप हर बार भगवान श्री के डिब्बे के बगल वाले डिब्बे में ही रिजर्वेशन हुआ रहता है?

अंत में, मैं उस बात पर आ रहा हूं जिसे लिखने के लिए कलम उठी थी और जो इस सब लिखने की हेतु है। भगवान श्री रात साढ़े आठ बजे जब प्लेटफार्म पर आए १४।१०।७३ को गुजरात मेल में बैठने, तो प्रेमियों व मित्रों की बड़ी भीड़ थी। भीड़ बड़ी थी कहना शायद ठीक नहीं है। भीड़ तो कभी भी बड़ी न होगी। भगवान के दर्शनों को सभी जगत आये तो भी कम है। असल में वहां भीड़ को व्यवस्थित ढंग देने की कोई व्यवस्था ही न थी। और मैंने देखा कि भगवान श्री भीड़ से छिलते-छिलते, बड़ी कठिनता से चल-चल कर डिब्बे तक पहुंच पाये। जब वे डिब्बे में खड़े हुए द्वार पर, तो उनकी चादर तक अलग खिंची हुई थी। उन्हें अपनी लम्बी दाढ़ी तक संभालनी पड़ती थी, इतनी ज्यादा भीड़ थी। उन्हें डिब्बे तक जाने के लिए जगह तक स्वयं चल-चलकर बनानी पड़ी। मैं स्वामी सत्य बोधिसत्व, स्वामी

गोविन्द सिद्धार्थ, साधु ईश्वर समर्पण, स्वामी आनंद बोधिसत्व, स्वामी आनंद मुनि, स्वामी शंकर भारती आदि समस्त प्रबन्धकों से निवेदन करता हूं कि भविष्य में भगवान श्री के ट्रेन में पहुंचने व ट्रेन से उतर कर बाहर कार तक जाने में मार्ग की बाकायदा व्यवस्था होनी चाहिए। और यदि यह व्यवस्था नहीं हो सकती तो बेहतर होगा कि भगवान श्री के आने-जाने की व्यवस्था जहाज द्वारा की जाय, हालांकि इससे अगेह भारती भी भगवान श्री का एक दर्शन चूकेंगे, पर वह स्वीकार है। भीड़ में भगवान श्री को यों छिलते देखना अस्वीकार है। वह बहुत पीड़ादायक है। जान बूझकर कोई धक्का-मुक्की नहीं करना चाहता। फिर वहां सब प्रेमी ही थे। पर यदि उचित व्यवस्था न हो तो भीड़ की यह प्रवृत्ति होती है कि जो पीछे होते हैं, वे आगे आना चाहते हैं। और आगे वाले पीछे जाना भी चाहें तो जा नहीं सकते। फल यह होता है कि पीछे वाले जब आगे आने की जद्दोजहद करते हैं तो आगे वालों को अनचाहे ही और आगे बढ़ना पड़ता है और इस तरह सब अव्यवस्थित हो जाता है। मैं यह नहीं कह रहा हूं कि इसमें किसी की गलती है पर अब इतनी भीड़ देख लिया है, अब अगर व्यवस्था नहीं की गई, तब जरूर गलती होगी। मैं प्रेमियों से भी निवेदन करना चाहता हूं कि प्रेम तो धैर्य में है। प्रेम तो खड़े होकर, थिर होकर एक निगाह देख लेने में है। पैर छूने में अगर हमारे प्रेमी को, हमारे भगवान को कष्ट होता हो, असुविधा होती हो, तो पैर न छूना ही, पैर छूना है। फिर प्रेम के हाथ इतने ही बड़े तो नहीं होते जितने कि ये दिखाई पड़ने वाले हाथ। हमारा प्रेम उनके पास गए बिना भी उनके चरणों का स्पर्श कर सकता है। चरण स्पर्श तो है एक भाव। वह भाव हो तो बस, चरण स्पर्श हो गया बिना स्पर्श के भी। मैं आशा करता हूं कि एक-एक प्रेमी इस बात का सदा ध्यान रखेगा कि भगवान श्री को मेरे प्रेम के कारण असुविधा तो नहीं हो रही है? प्रेम मूर्च्छा नहीं, प्रेम परम होश है। क्राइस्ट ने कहा है—"धन्य हैं वे जो पीछे खड़े होने में समर्थ हैं।" भगवान श्री भी इस बात को बहुत बार हमें बता-सिखा चुके हैं। और हम हैं कि उन्हीं के सामने, उन्हीं से मिलने के लिए सबसे आगे पहुंच जाना चाहते हैं। और इतनी शक्ति लगाते हैं आगे पहुंचने के लिए कि भगवान तक दुबारा हमारे बीच आने का मन न करें। आशा है, हम इस सब पर होशपूर्वक विचार करेंगे और आइन्दा,

पीछे खड़े होने में समर्थ रहेंगे।

★ ★ ★

भगवान श्री साधकों को गहरे, गहरे और गहरे लिए जा रहे हैं। यह सत्य वे अनुभव करते हैं जो शिविरों में नियमित जाते हैं। भगवान श्री इस बार कीर्तन के समय काफी झूम कर ताली बजाते थे। यानी सच, मैं झूम उठता हूं स्मरण करके, वे करीब-करीब हमारे साथ नाच उठते थे। संध्या त्राटक ध्यान के समय भी—इस बार वे हाथों को काफी शक्ति से हिलाते थे।···सच भगवान श्री खुद के बाबत कुछ भी नहीं लिखा जाता। उनके स्मरण मात्र से कलम हाथ से छूटने लगती है, आंखें बन्द होने लगती हैं, और भीतर कहीं ध्यान में डूबना होने लगता है। ऐसे भगवान के बारे में क्या लिखा जाये? कैसे लिखा जाए??

★ ★ ★

अन्त में यह कि स्वामी योग प्रीतम जी, अब आप शिविरों के समाचार देते रहना 'युक्तान्द' व 'आनंदिनी' आदि के माध्यम से। क्योंकि स्वामी अगेह भारती अब शिविरों में शायद न आ सकेगा। परमात्मा की शायद यही मर्जी है।

सबको प्रणाम के साथ!

● *स्वामी अगेह भारती*
जबलपुर

मिलें—मुल्ला नसरुद्दीन से

मुल्ला नसरुद्दीन लंगड़ा कर चल रहा था और पैरों की पीड़ा से उसकी आंखों में आंसू निकल आये थे। उसकी पत्नी ने कहा: "मुल्ला, तुम रो क्यों रहे हो?" मुल्ला बोला: "मेरे जूते पैरों को बहुत तकलीफ पहुंचा रहे हैं।"

पत्नी ने मुल्ला के पैरों की ओर देखा तो कहा: "अरे, तुमने तो गलत पैरों में जूते पहन रखे हैं।"

नसरुद्दीन ने नाराज हो कर कहा: "लेकिन मेरे पास कोई और पैर हैं ही कहां?"

कोई गरीब क्यों, अमीर क्यों ?

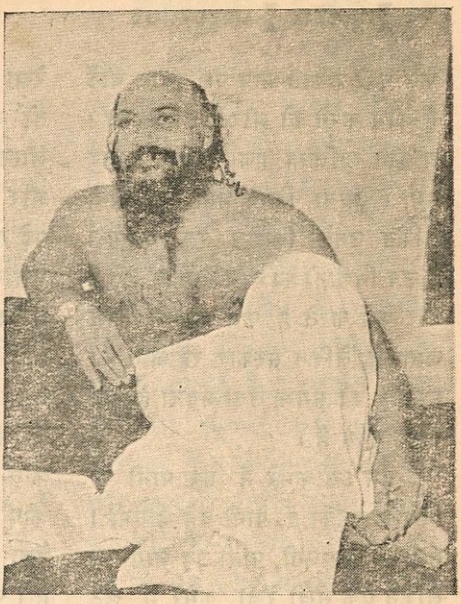

(२२ अगस्त १९७२ को बम्बई में लाओत्से के ताओ-तेह-किंग पर दी गई प्रवचन-माला के अन्तर्गत प्रश्नोत्तरी से)

प्रश्न : एक मित्र ने पूछा है और एक ने ही नहीं, बहुत मित्रों ने, कोई बीस मित्रों ने वही सवाल पूछा है। पूछा है कि आपने कहा है कि प्रत्येक कर्म का फल तत्काल मिल जाता है, तो एक आदमी अंधा और एक आदमी गरीब और एक आदमी अमीर क्यों पैदा होते हैं। अगर तत्काल फल मिल जाता है तो फिर जन्म-जन्म में यह भेद क्यों पड़ता है ?

इस भेद का कारण समझ लें। फल तो तत्काल मिलता है। लेकिन यह भेद पड़ता है और भेद इसलिए पड़ता है कि तत्काल मिले हुए फल का जो इकट्ठा जोड़ है, वह आप हैं। उसका जोड़ कहीं किसी ईश्वर के हाथ में नहीं है। वह जोड़ आप हैं। आप जो भी इस जिन्दगी में करते हैं, आप उस सबका परिणाम हैं।

आपने जिन्दगी में हजार बार क्रोध किये तो आप वही आदमी नहीं हो सकते, जिसने एक भी बार क्रोध नहीं किया। हजार बार क्रोध किया, हजार बार आपने फल पाया। जिस आदमी ने एक भी बार क्रोध नहीं किया, उस आदमी ने एक भी बार

फल नहीं पाया। आप पर हजार चोटें हैं क्रोध करने की और फल पाने की। आपका व्यक्तित्व हजार घावों से भर गया। माना कि वे घाव सूख गये, लेकिन उनके निशान रह जाएंगे। ▶ उन निशानों का नाम संस्कार है। ◀

कर्म करते हैं, फल तत्काल मिल जाता है, लेकिन संस्कार रह जाते हैं। संस्कार को समझ लेना जरूरी है, यह थोड़ा सूक्ष्म है।

हम इस कमरे में एक पानी का गिलास लुढ़का दें, पानी बह जाएगा। सुबह धूप आएगी, पानी उड़ जायगा। लेकिन एक सूखी रेखा कमरे में छूट जाएगी। क्या वह सूखी रेखा पानी की है? पानी अब बिलकुल नहीं है, इसलिए उसको पानी का कहना ठीक नहीं मालूम पड़ता। क्योंकि पानी की एक बूंद भी नहीं रह गई वहां, सब उड़ गई। वह सूखी रेखा पानी की है, यह कहना उचित नहीं है; लेकिन फिर भी पानी की ही है। क्योंकि पानी के बहने से ही बन गई थी—इस कमरे की धूल पर। ▶ वह संस्कार है। ◀ सूख गया सब, पानी बिलकुल नहीं बचा, फिर भी रेखा रह गई। अब आप दुबारा पानी डालें तो बहुत संभावना है कि सूखी रेखा को पकड़कर वह पानी बहे।

संस्कार का मतलब होता है टेन्डेन्सी या रुझान। अब उस सूखी रेखा की वृत्ति होगी कि पानी मिले तो वह उससे बह जाए। क्योंकि लीस्ट रेसिस्टेन्स के नियम के कारण, और अगर कहीं से पानी को बहना पड़े तो फिर से रास्ता बनाना पड़ेगा, धूल काटनी पड़ेगी, इतनी झंझट पानी भी नहीं लेना चाहता है। जहां धूल कटी है, रास्ता बना है, उसी से बह जाता है।

जिस आदमी ने कल दिन भर क्रोध किया, आज सुबह वह उठेगा, क्रोध की सूखी रेखा के साथ। सूखी रेखा के साथ उठेगा, जो सिर्फ टेन्डेन्सी है। फल तो उसे कल ही मिल गया। जब क्रोध किया तभी मिल गया। लेकिन क्रोध उसने किया और फल मिला तो उसके व्यक्तित्व में सूखी रेखा क्रोध की बन गई। आज सुबह जब वह उठेगा तो वह जो सूखी रेखा है, वह तत्पर है कि जरा सा भी मौका मिले, कोई भी वेग उठे, वह सूखी रेखा उसको बहा देगी अपनी राह से। क्रोध पुनः प्रकट हो जायगा।

जब हम एक जन्म के बाद पैदा होते हैं, तब हम संस्कार लेकर पैदा होते हैं। वह जो हमने पिछले जन्म में किया है और जन्मों-जन्मों में किया हैं, ▶ वही हमारा व्यक्तित्व है। ◀ वह सब सूखी रेखाएं लेकर हम पैदा होते हैं। इसलिए दो बच्चों में भेद होता है। इसलिए नहीं कि उनके

पिछले जन्मों के कर्मों के फल उन्हें अभी भोगना हैं। फल तो वे भोग चुके, लेकिन फल भोगने के बाद जो वृत्तियों का प्रभाव शेष रहा, जो-जो उन्होंने किया उसकी जो-जो पंक्ति-बद्ध रेखाएं रह गईं, वे जो आदतें रह गईं, उनको लेकर बच्चा जन्म रहा है। इसलिए दो बच्चे अलग-अलग हैं।

जिन मित्रों ने सवाल पूछा है,उनमें यही ध्वनि है कि अगर ऐसा है तो फिर कर्म-फल का सिद्धांत समाप्त हो गया; क्योंकि तत्काल हमें फल मिल जाता है, मरते वक्त सब लेखा-जोखा पूरा हो जाता है। तब तो सब व्यक्ति समान पैदा होना चाहिए, क्योंकि लेखा-जोखा पूरा हो गया।

लेखा-जोखा तुम्हारा पूरा हो गया। लेकिन हर आदमी ने लेखा-जोखा अलग ढंग से पूरा किया है। और हर आदमी के लेखे-जोखे में अलग-अलग घटनाएं घटी हैं और हर आदमी ने अलग-अलग संस्कार अर्जित कर लिया है। और उन संस्कारों को लेकर वह पैदा होता है।

एक मित्र ने पूछा है कोई आदमी अंधा पैदा हो जाता है, कोई आदमी गरीब पैदा हो जाता है, क्या कारण है ? और कोई सोने के चमचे लेकर पैदा होता है ? थोड़ा जटिल है और जटिल हो गया इस सदी के कारण। इतना जटिल नहीं था, इतना जटिल नहीं था; क्योंकि गरीबी - अमीरी बहुत सीधी बातें थीं। और साफ था कि गरीब गरीब है अपने कर्मों के कारण और अमीर अमीर है अपने कर्मों के कारण। इसमें सचाई है।

इसमें सचाई है, क्योंकि हम गरीब होने का संस्कार भी अर्जित करते हैं। लेकिन गरीब होने का संस्कार बड़ी बात है, सिर्फ धन से उसका सम्बन्ध नहीं है। और बहुत सी चीजों से वह संबंधित है। जटिलता इसलिए है कि अब तक जब भी हम गरीब आदमी के बाबत सोचते थे, तो अतीत में गरीब आदमी का मतलब था कि जिसके पास धन नहीं है। एक ही मतलब था। लेकिन अब जमीन पर विज्ञान ने बहुत धन पैदा कर लिया। सौ-पचास वर्षों में निर्धन आदमी जमीन पर कोई न होगा। तब गरीब के नये अर्थ शुरू हो जाएंगे। पुराना गरीब नहीं मिलेगा। सिर्फ उससे धन का जो जोड़ था, वह मिट जाएगा। गरीब के नये अर्थ शुरू हो जाएंगे। कोई आदमी बुद्धि में गरीब होगा, कोई आदमी स्वास्थ्य में गरीब होगा, कोई आदमी सौन्दर्य में गरीब होगा।

ध्यान रखें, धन तो मनुष्य जाति का इतने दिनों का जो श्रम है उसके परिणाम में सबको उपलब्ध हो

जाएगा। लेकिन तब सूक्ष्मतम दरिद्रताएं पैदा होनी शुरू हो जाएंगी। जब स्थूल दरिद्रताएं मिटती हैं, तब सूक्ष्म दरिद्रताएं शुरू हो जाती हैं। जब सबके पास धन बराबर होता है तब धन की बात तो समाप्त हो गई। लेकिन तब बुद्धि, प्रतिभा, गुण, उनकी दीनता अखरने लगती है। दरिद्रता बड़ा शब्द है; उसकी अभिव्यक्तियां बहुत हो सकती हैं। अब तक जो बड़ी से बड़ी अभिव्यक्ति थी, वह धन की थी। भविष्य में जो बड़ी अभिव्यक्ति है, वह गुण की होगी। लेकिन वह जारी रहेगा। क्योंकि हम अलग-अलग कर्म से अलग-अलग संस्कार अर्जित करते हैं।

कुछ लोग दरिद्र होने की आदत लेकर पैदा होते हैं। कुछ लोग समृद्ध होने की आदत लेकर पैदा होते हैं। जो लोग समृद्ध होने की आदत लेकर पैदा होते हैं, उनको भिखारी बनाकर रास्ते पर खड़ा कर दें, फिर भी उनके चाल में सम्राट की रौनक होगी। जो लोग दरिद्र होने की आदत लेकर पैदा होते हैं, देखें आप, बड़े-बड़े महलों में भी उन्हें रख दें, उनसे ज्यादा दरिद्र आदमी खोजना मुश्किल हो जाएगा।

कंजूस आदमी वह है, जो दरिद्र होने की आदत लेकर पैदा हुआ है। धन भी उसके पास आ जाए तो उसको खर्च नहीं कर पाता। धन तो मिल भी सकता है समाज की व्यवस्था से, लेकिन खर्च करने की जो आदत है, धन को भोग लेने की जो आदत है, वह बहुत गहरा संस्कार है। एक आदमी को आप धनी बना दें, और आप अचानक पाएंगे कि इतना दरिद्र वह पहले नहीं था, जितना अब हो गया है। अक्सर ऐसा होता है कि गरीब आदमी कंजूस नहीं होता, क्योंकि जब बचाने को ही कुछ नहीं होता तो क्या बचाना? एक गरीब आदमी को थोड़ा रुपये दे दें और जिसको भारत में हम बहुत दिन से कहते हैं—निन्नानबे का चक्कर—वह उसमें फंस जाएगा। एक आदमी को निन्नानबे रुपये दे दें, अब उसकी एक ही इच्छा होगी कि कैसे सौ हो जायें। यह इच्छा बड़ी स्वाभाविक है। और उसको आज जो एक रुपया मिलेगा, वह आज भूखा सोना चाहेगा, पर सौ कर लेना चाहेगा। लेकिन जब एक दफा मन में निन्नानबे के सौ करने का रस लग जाता है तब फिर सौ से एक करने का, फिर एक सौ एक से एक सौ दो करने का रस लग जाता है। और फिर रस बढ़ता चला जाता है।

पुरानी कथा है पंचतंत्र में कि एक सम्राट सदा अपने नाई से पूछता है कि तू इतना प्रसन्न कैसे है, तेरे पास कुछ भी नहीं है। तो नाई कहता है कि जो आप मुझे दे देते हैं वह

बहुत है, सांझ गुजर जाती है, दिन गुजर जाता है। दूसरे दिन फिर आपकी सेवा कर जाता हूं, मालिश कर जाता हूं, बाल बना जाता हूं, फिर जो मिल जाता है, वह दिन भर के लिए काफी है।

फिर अचानक सम्राट ने देखा कि नाई उदास है और बड़ा बेचैन है और लगता है कि रात भर सोया नहीं है। तो सम्राट पूछता है कि आज तेरे हाथों में ताकत नहीं मालूम पड़ती और रात तू सोया नहीं ऐसा लगता है, तेरी आंखों में नींद है। कहीं तू भी निन्नानबे के चक्कर में तो नहीं पड़ गया। उस नाई ने पूछा कि आपको कैसे पता चला ?

सम्राट ने कहा कि पागल, तू इस झंझट में मत पड़ना; यह मेरे वजीर की करतूत है। कल उससे मेरा विवाद हो गया। मैंने कहा कि नाई बड़ा शांत, बड़ा संयमी आदमी है। उसने कहा, नहीं, ऐसा कुछ मामला नहीं है। सिर्फ निन्नानबे उसके पास नहीं हैं। तो उसने मुझसे कहा था कि आज जाकर निन्नानबे की एक थैली उसके घर में फेंक आऊंगा और कल सुबह देख लेना। तू पड़ गया झंझट में। तू रात भर क्या सोचता रहा ?

नाई बोला कि मैं रात भर यही सोचता रहा कि सौ रुपये कैसे हो जायें। रात को मैं सो नहीं सका। पहली रात मैं सो नहीं सका। और जब कभी मेरे पास कुछ नहीं होता था, तब मैं मजे से सोता था। इस निन्नानबे ने ठीक सौ का खयाल दे दिया। ऐसे ही जैसे दांत टूट जाए और जीभ वहीं-वहीं जाने लगे, वैसे ही वह जो सौ है वह खाली गड्ढा है, जीभ वहीं-वहीं जाने लगी। रात भर सो नहीं सका।

सम्राट ने कहा, अगर तू समझ, तो वह निन्नानबे की थैली फेंक दे, नहीं तो तू मरेगा दुख में। हम मर ही रहे हैं पहले से। हमारी तरफ देख ? सौ होने से कुछ भी न होगा। निन्नानबे होना खतरा है, सौ होने से कुछ भी न होगा। फिर एक दफा यात्रा शुरू हो गई तो तुम मुश्किल में पड़ जाओगे। लेकिन उस नाई ने कहा कि महाराज, एक दफा जीवन में मौका मिला है, सौ तो कर लेने दें। लेकिन उस दिन के बाद नाई कभी सुखी नहीं हो सका। कोई भी नहीं हो सकता।

होता क्या है ?

लोग आदत लेकर पैदा होते हैं। परिस्थिति मौका बनाती है उस आदत के पैदा हो जाने का या रुक जाने का। धन अब तक परिस्थिति में कम था, इसलिए कुछ लोग गरीब थे, कुछ अमीर थे—धन के लिहाज से। और

इस वजह से दूसरी गरीबियां दिखाई ही नहीं पड़ती थीं। अब दुनिया मुसीबत में पड़ेगी; क्योंकि धन की गरीबी परिस्थितियों से मिटी जा रही है। मिट जाएगी। और तब आपको पहली दफा पता चलेगा कि और भी गरीबियां हैं, जो धन से बहुत गहरी हैं।

वैज्ञानिक कहते हैं कि पांच प्रतिशत लोग ही केवल प्रतिभाशाली होते हैं। केवल पांच प्रतिशत। और यह प्रयोग हजारों तरह से किया है और यह प्रतिशत पांच से ज्यादा कभी नहीं होता। इसे थोड़ा आप समझें।

यह केवल मनुष्यों के लिए ही नहीं सीमित है। जानवरों में भी केवल पांच प्रतिशत जानवर कुशल होते हैं, शेष पंचानबे प्रतिशत अकुशल हैं। जो कबूतर चिट्ठी-पत्री पहुंचा देते हैं, वे पांच प्रतिशत कबूतर हैं। पंचानबे प्रतिशत नहीं पहुंचा सकते। और अनेक-अनेक प्रयोग से यह बड़ी हैरानी की बात प्रकट हुई कि पांच प्रतिशत कोई वैज्ञानिक नियम है प्रकृति में। जैसे कि सौ डिग्री पर पानी के गर्म होने का नियम है। ऐसे ही पांच प्रतिशत प्रतिभा होती है।

पिछले वर्षों में चीन में उन्होंने माइण्ड-वाश के लिए, ब्रेन-वाश के लिए बहुत प्रयोग किये। लोगों के मस्तिष्क बदल देने के लिए बहुत प्रयोग किये। कोरियाई युद्ध के बाद चीन के हाथ जो अमरीकी सैनिक पड़ गये थे, उन्होंने लौट कर जो खबरें दीं, उनमें एक खबर यह थी। उन्होंने यह खबर दी कि चीनियों ने तो सबसे पहले इसकी फिक्र की कि हममें प्रतिभाशाली कौन-कौन है? और तब उन्होंने पांच प्रतिशत लोगों को अलग कर लिया। अगर सौ कैदी पकड़े तो उन्होंने पहले पांच प्रतिभाशाली लोगों को अलग कर लिया।

और चीनियों का कहना है कि पांच प्रतिभाशाली लोगों को अलग कर लो, पंचानबे को बदलने में कोई दिक्कत ही नहीं होगी। पांच को अलग कर लो, पंचानबे के ऊपर पहरेदार भी रखने की कोई जरूरत नहीं है। वे पांच हैं असली उपद्रवी। अगर वे पांच वहां रहे तो झंझटें जारी रहेंगी। भागने की चेष्टा होगी, बगावत होगी, कुछ उपद्रव होगा। और अगर वे पांच मौजूद रहे तो पांच जो हैं, लीडर्स हैं, नेतृत्व है उनके पास। उनकी मौजूदगी में आप बाकी को भी नहीं बदल सकते। बाकी सदा उनके पीछे चलेंगे। उनके पांच प्रतिशत को अलग कर लो, तो पंचानबे प्रतिशत बिलकुल खाली हो जायेंगे। और उनकी जगह किसी को भी रख दो, वे उनका नेतृत्व स्वीकार कर लेंगे।

यह केवल आदमियों में होता तो हम सोचते, शायद आदमी की समाज-व्यवस्था का परिणाम है। वैज्ञानिकों ने चूहों पर प्रयोग किया है, खरगोशों पर प्रयोग किया है, भेड़ों पर प्रयोग किया है सर्वत्र वे पांच प्रतिशत हैं। आपने सुना है न कि भेड़ें कतार बांध कर चलती हैं। लेकिन किसी के भी पीछे तो चलती हैं। पांच प्रतिशत भेड़ें आगे चलती हैं। सभी भेड़ें पीछे नहीं चलतीं, पांच प्रतिशत भेड़ें आगे भी चलती हैं। वह पांच प्रतिशत भेड़ों को अलग कर लो, बाकी झुंड एकदम केआटिक हो जाता है, उनको कुछ समझ में नहीं आता कि अब क्या होगा।

जो लोग 'जू' में काम करते हैं, अजायबघरों में काम करते हैं उनका अनुभव भी ऐसा ही है। लंदन या मास्को में, जहां बड़े-बड़े अजायबघर हैं, उन अजायबघरों में काम करने वाले लोगों को पता है कि जब भी नये बन्दर आते हैं, तब उनमें से पांच प्रतिशत को तत्काल अलग कर लेना होता है। वे लीडर्स हैं, पालीटिशियन हैं, उनको अलग कर लेना पड़ता है। वे उपद्रव मचा देंगे। उनको अलग कर लेने के बाद बाकी सब ठीक हो जाते हैं, बिलकुल अनुशासन मान लेते हैं।

इससे भी बड़े मजे की बात है, वह यह पता चली है कि जेलखानों में जो अपराधी हैं, राजधानियों में जो राजनीतिज्ञ हैं, मंदिरों में, चर्चों में, गिरजाघरों में जो पुरोहित हैं, युनिवर्सिटीज में, विद्यालयों में, कालेजों में जो पंडित हैं, ये भी पांच प्रतिशत हैं सब मिलाकर। यह जरा जटिल बात है; क्योंकि लंदन के जू में प्रयोग किया जा रहा था कि अगर बंदरों को ठीक से भोजन, ठीक से सुविधा दी जाए, उनको कोई अड़चन न दी जाए, जगह दी जाए, तो जो पांच प्रतिशत प्रतिभाशाली लोग हैं, वे बाकी शेष बंदरों को अनुशासित रखने में सहयोगी होते हैं। उनको गड़बड़ नहीं करने देते। वे पांच प्रतिशत नेतृत्व ग्रहण कर लेते हैं। अगर तकलीफ दी जाए, भोजन कम हो, सुविधा कम हो, अड़चन हो, तो वे पांच प्रतिशत क्रिमनल हो जाते हैं, अपराधी हो जाते हैं। और वे पांच प्रतिशत बाकी से उपद्रव करवाके हड़ताल करवा या कुछ न कुछ करवाते हैं।

वैज्ञानिकों का यह कहना है कि अपराधी और राजनीतिज्ञ एक ही सिक्के के दो पहलू हैं। इसलिए आप कभी देखें, जब तक राजनीतिज्ञ ताकत में नहीं होता है, तब तक हड़ताल करवाता है। जब वह ताकत में हो जाता है, तब वह हड़ताल तुड़वाता है। यह बड़े मजे की बात है, यह वही

बन्दर वाला नियम है। इसमें कुछ फर्क नहीं है। जब तक राजनीतिक ताकत के बाहर है, तब तक वह सब तरह के उपद्रव को क्रांति कहता है। जब वह ताकत में आ जाता है, तब सब तरह की क्रांति को वह उपद्रव कहता है। जब वह ताकत में होता है, तब वह कहता है कि वे लोग अपराधी हैं जो उपद्रव करते हैं। जब वह ताकत के बाहर होता है, तब वह कहता है कि लोग बगावती हैं, विद्रोही हैं। उसकी भाषा बदल जाती है। ताकत में आते ही वह अनुशासन की बात करता है और वह कहता है कि अगर अनुशासन रहेगा, तो सुख शान्ति सब आ जाएगी। ताकत के बाहर कर दो, तो वह कहता है कि बगावत चाहिए, क्रांति चाहिए, बिना क्रांति के कुछ भी नहीं हो सकता। क्रांति से ही सुख आयेगा।

लेकिन चाहे अपराधी हो, चाहे राजनीतिज्ञ हो, यह पांच प्रतिशत ही है मनुष्य के पास।

आदमियों को छोड़ दें, पशुओं को छोड़ दें, जिन लोगों ने वनस्पतियों पर प्रयोग किया है, वे भी कहते है कि अफ्रीका के जंगल में भी जो वृक्ष सारी परेशानियों, सारे संघर्षों को पार कर जंगल के ऊपर उठकर सूरज तक पहुंच जाते हैं, उनकी संख्या भी पांच प्रतिशत ही है। अगर एक पानी का सरोवर हो और उसमें मछलियां हों और उसमें आप जहर डाल दें तो पांच प्रतिशत ही मछलियां उनमें हैं जो उस जहर से बचने की चेष्टा करती हैं; बाकी तो राजी हैं। आपके शरीर में जब कोई बीमारी प्रवेश करती है, तो आपके शरीर के सेल्स में भी सिर्फ पांच प्रतिशत हैं जो उसको रेसिस्ट करते हैं, उससे लड़ते हैं। अगर वे पांच प्रतिशत अलग कर दिये जाएं, तो फिर आपके शरीर में कोई रेसिस्टेन्स, कोई अवरोधक शक्ति नहीं रह जाती। तब कोई भी बीमारी प्रवेश कर सकती है।

गरीबी मिटानी बड़ी मुश्किल बात है। वह पांच प्रतिशत किसी न किसी अर्थ में अमीर होंगे ही। अर्थ बदल सकते हैं। कभी उनकी अमीरी मकान की होगी, कभी उनकी अमीरी ताकत की होगी, कभी उनकी अमीरी ज्ञान की होगी, कभी उनकी अमीरी काव्य की, कला की होगी। लेकिन एक हिस्सा अमीर होगा, एक हिस्सा गरीब होगा।

गरीबी और अमीरी का यह संदर्भ अगर खयाल में रहे तो समाजवाद या साम्यवाद से संस्कार और कर्म के सिद्धांत में कोई अंतर नहीं पड़ता। हम बदल सकते हैं, परिस्थिति बदल सकती हैं, लेकिन व्यक्ति के भीतर की जो क्षमताएं हैं उन्हें बदलना आसान नहीं है। ▶ उन्हें व्यक्ति ही जब बदलना चाहे, तब बदल सकता है। ◀

महावीर

मेरी दृष्टि में : भगवान रजनीश

(भगवान श्री द्वारा १७ सितंबर ६९ से २ अक्टूबर ६९ तक श्रीनगर के पास डल झील स्थित शिविर में दिए गए प्रवचन जो 'महावीर मेरी दृष्टि में' प्रकाशित हो चुके हैं, का संक्षिप्त रूपांतरण।)

★ षष्ठम पुष्प ★

इतिहास—बाहर घटी घटनायें, तथ्य (फेक्ट्स) की तरह संगृहीत की जायें। पुराण—बाहर घटित घटनाओं की अपेक्षा इस पर जोर देता है कि वे इस भांति इकट्ठी हों कि कोई उनसे गुजरे तो उसके भीतर कुछ घटित हो जाये। तथ्य और इतिहास पर जोर देने वाला—महावीर, क्राइस्ट पर जोर देगा—कैसा जीवन ! पुराकथा (मिथ) की दृष्टि वाला व्यक्ति 'तुम' पर जोर देगा कि महावीर का कैसा जीवन कि 'तुम' बदल जाओ। इसमें बुनियादी फर्क है।

पुराण (मिथ) किसी दृष्टि से अप्रामाणिक मालूम पड़ सकता है; जैसे, जीसस का सूली पर चढ़ना और फिर तीन दिन बाद जीवित हो जाना या जीसस का कुंआरी मां से पैदा होना—यह प्रमाणित नहीं हो सकता। बाहर की दुनिया की यह घटना ही नहीं है, क्योंकि कुंआरी लड़की से लड़का कैसे पैदा होगा ? लेकिन जिनकी दृष्टि गहरी है वे इसे भीतर की घटना ही कह रहे हैं कि जीसस जैसा बेटा अत्यन्त कुंआरी आत्मा—कुंआरे चित्त से ही जन्म ले सकता है। यह हो सकता है शरीर कुंआरा न हो चित्त बिलकुल कुंआरा हो और इससे उल्टा भी हो सकता है। इतिहास सिद्ध भी कर दे कि जीसस का जन्म कुंआरी मां से हुआ है, तो नुकसान ही पहुंचाएगा, यानी मैं मानूंगा कि बात अप्रमाणित ही रहनी चाहिये कि जीसस जैसे व्यक्ति का जन्म कुँआरे मन से ही होता है। और यदि किसी मां को जीसस जैसे बेटे को जन्म देना हो तो उसके चित्त का अत्यन्त कुंआरा होना जरूरी है और कुंआरेपन का कोई संबंध शरीर से है ही नहीं—शरीर तो यन्त्र है; कुंआरापन तो आंतरिक मनोदशा है।

अब जैसे, महावीर को सर्प काट लेता है और दूध बहता है—इसे ऐतिहासिक-वैज्ञानिक तरह से सिद्ध नहीं किया जा सकता, जो करते हैं वे गलत करके महावीर को व्यर्थ कर देंगे। और जो 'मिथ'—गाथा—है, वह खो जायेगी। दूध निकलने का कुल कारण इतना है कि महावीर का मन मातृत्व से भरपूर है, मां से अन्यथा वह नहीं हो सकते; क्योंकि उनका होना ही मातृत्वमय है, उनके भीतर से कुछ और नहीं निकल सकता है सिवाय दूध के। न तो शारीरिक अर्थों में, न तथ्य और इतिहास के अर्थों में इस बात का

कोई मूल्य है। पैर से दूध निकलने की घटना को कोई बिल्कुल सच कहेगा, कोई बिलकुल गलत। सच कहने वाले यह सिद्ध करने की कोशिश करेंगे किसी तरकीब से कि कैसे दूध निकल सकता है।

महावीर को सर्प के काटने पर पैर से दूध निकला—यह सिद्ध करने की कई जैन मुनियों ने कोशिश भी की, किन्तु इससे महावीर का कुछ होना न रहेगा और माँ के स्तन से दूध का निकलना कोई खूबी की बात नहीं है। यह एक बिलकुल आंतरिक बात है। अगर सिद्ध भी कर दोगे तो महावीर को पोंछ डालोगे—उनकी वह जो आंतरिक बात थी वह खो जायेगी। वह बात कुल इतनी है कि महावीर का प्रत्युत्तर मां का उत्तर होने वाला है। चाहे तुम कुछ भी करो—जहर दो, शत्रुता करो, चोट पहुंचाओ, गाली दो—वहां से प्रेम और करुणा ही बह सकती है। अब दूध का क्या मतलब? दूध का मतलब है जो तुम्हें पोषण दे सके; और कुछ मतलब नहीं होता। हमें कोई गाली दे, हम जो करेंगे वह घातक सिद्ध होगा उसके लिये। ⧗ और हम जो बात कर सकते हैं वह घातक या पोषक सिद्ध हो। लेकिन महावीर से प्रत्युत्तर, रिएक्शन होगा महावीर का, वह पोषक सिद्ध होने वाला है। लेकिन तथ्य में जाने पर यह भी जरूरी नहीं कि सर्प ने काटा ही हो; और दूध निकला ही हो—जरूरी केवल इतना है कि महावीर के पूरे जीवन को जिसने भी अनुभव किया है, उसे ऐसा लगा है कि इसे अगर हम कविता में कहें तो कह सकते हैं कि सर्प भी काटे महावीर को, तो दूध ही निकल सकता है। लेकिन इसलिए मुझे कोई प्रयोजन नहीं, यह मैं सिद्ध करने जाऊंगा ही नहीं। सिद्ध कर भी सकता हूं तो भी सिद्ध करने नहीं जाऊंगा; क्योंकि मेरी दृष्टि ही यह है कि महावीर को प्रसंग बनाकर 'तुम' कैसे गति कर सकते हो। और यह तब हो सकता है कि बहुत कुछ, जो कहा जाता है, वह छोड़ देना पड़े; बहुत कुछ जो नहीं कहा जाता है, उसे खोज लेना पड़े। और हम अब एक दृष्टि लेकर प्रवेश करते हैं और अंतस् की खोज में चलते हैं तब क्या है? कठिनाई क्या है? ⧗

अब यदि महावीर-चक्र और अन्य बहादुरी के प्रमाण-पत्र प्राप्त एक आदमी को डरपोंक कहा जाय तो वह राजी न होगा और वह सिद्ध भी कर देगा कि वह बहादुर आदमी है, तथा प्रमाण-पत्र गलत भी नहीं कहते; फिर भी यह हो सकता है कि वह भीतर से एक भयभीत आदमी हो। ऐसा हुआ है कि अन्तस् चेतन

में भयभीत मनुष्य बाहर अपने को बाहर के कृत्यों से निर्भय सिद्ध करने की कोशिश में लगा रहता है; इसलिए भी कि उसे अपने भीतर का भय भूल जाये और मिट जाये।

मुझे बाहर के तथ्यों से कोई प्रयोजन नहीं, न ही उस तरह की प्रमाणिकता से; क्योंकि एक ही प्रमाणिकता मैं मानता हूं कि जो मैं कह रहा हूं वह जिन प्रयोगों से मुझे दिखाई पड़ता है कि ऐसा है—उन प्रयोगों में से कोई भी गुजरने को तैयार हो।

अब समझ लें कि पहले-पहल दूरबीन बनी और जिसने बनाई उसने मित्रों को आमंत्रित किया और कहा कि तुम्हें ऐसे तारे दिखला सकता हूं जो तुमने पहले कभी नहीं देखे। तो उन्होंने दूरबीन से देखने से इन्कार कर दिया कि हो सकता है कि तुम्हारी दूरबीन में कुछ बात ऐसी हो कि जिससे कुछ तारे ऐसे दिखाई पड़ते हैं, जो नहीं हैं; और तुम खुली आंख से कुछ ऐसी बातें बताओ जो दूर की हैं फिर हम मानें कि तुम्हारी दूरबीन की कोई बात हो सकती है—पहले वह कुछ दूर का बताओ जो हमको दिखाई नहीं देता, परन्तु तुमको दिखाई पड़ रहा है, फिर ही हम दूरबीन से झांकें। उन्होंने झांका और कहा कि इससे कुछ पक्का नहीं होता—कुछ दूरबीन की करामात है। मेरी बात आप समझे न? लेकिन वह आदमी क्या कर सकता है, इसके सिवाय और उपाय क्या है कि दूरबीन से झांक कर ही देखा जाय, या कि वह यही कर सकता है कि तुम भी दूरबीन बना लो जिसमें कि तुम्हें यह पक्का हो जाये।

और मामला इतना जटिल है कि मैं अंतस् के प्रयोगों के लिए कहूं तो तुम्हें ठीक वही दिखाई पड़े जो मुझे दिखाई पड़ता है; लेकिन यह पक्का है कि तुम्हें जो भी दिखाई पड़े तुम इतना अवश्य अनुभव कर सकोगे कि जो कुछ मैं कह रहा हूं वह मुझे दिखाई पड़ रहा होगा। दूसरे तुम यह भी अनुभव कर सकोगे कि जो कुछ मैं कह रहा हूं उसके पीछे जो दृष्टि है, वह तुम्हें कुछ भी दिखाई पड़े तो फौरन तुम्हारी समझ में आ जाएगा कि वह दृष्टि क्या है और यह भी तुम्हें दिखाई पड़ेगा कि महावीर मेरे लिए गौण हैं। न क्राइस्ट का, न बुद्ध का कोई मूल्य है—मूल्य है हमारा जो भटक रहे हैं; और इनको किसी तरफ से, किसी कोण से एक चीज दिखाई पड़ जाये जो इनकी भटकन को मिटा दे; और एक दिन ये वहां पहुंच जायें जहां कि कोई भी महावीर कभी पहुंचता रहा है।

इसलिए मेरा प्रयोजन ही भिन्न है, वह यह है कि मेरी बातचीत से तुम्हें बेचैनी पैदा हो जाये और तुम मुझसे प्रमाण पूछने की बजाय तुम प्रमाण की तलाश में खुद निकल जाओ। बात झूठ भी हुई तो भी तुम वहां पहुंच जाओगे जहां पहुंचना चाहिये; और सच हुई तो भी वहां तुम पहुंच जाओगे। पहुंचने पर जरूरी नहीं कि लौटकर कहने आओगे। जैसे, मान लो इस कमरे में आग नहीं लगी; पर मैं चिल्ला कर कहूं कि लगी हुई है—हम मर जायेंगे अगर भीतर रहते हैं, बाहर चलो और तुम इसे गरमी, धुएं आदि के अभाव में कतई इंकार कर दो। और मैं कहूं कि बाहर चलो तो पता चल जायेगा कि मकान में आग लगी थी। जब तक मकान के भीतर हो तुम्हें कुछ दिखाई नहीं पड़ेगा, और बाहर पहुंच जाओ और देख कर कहो कि सच में आग नहीं लगी थी; लेकिन बाहर जाकर तुम देखते हो कि सूरज निकला है, फूल खिले हैं और ऐसा आनन्द है जिसका अनुभव तुमने पहले कभी नहीं किया, तो तुम मुझे धन्यवाद दोगे और कहोगे कि कृपा की कि कह दिया कि मकान में आग लगी है। क्योंकि हम मकान की भाषा ही समझ सकते थे; सूरज, फूल की भाषा समझ ही नहीं सकते थे, क्योंकि सूरज और फूल हमने देखा ही न था और तुमने इस आनन्द के बारे में कहा भी होता, तो हम कहते कि कैसा सूरज! कैसे फूल! कैसा बाहर! हम तो एक ही भाषा समझ सकते थे मकान की। अच्छा हुआ आपने कह दिया कि मकान में आग लगी है।

मकान में होना ही आग में होना है, सब कुछ चूका जा रहा था, सब कुछ जो मिल सकता था। ▶ इसलिए बहुत-सी बातें हैं, जिनको हम प्रमाण कहते हैं, उन पर मेरी कोई श्रद्धा नहीं। प्रमाण एक ही है कि तुम पहुंच जाओ। और तुम पहुंचोगे तो इंकार नहीं कर सकते जो मैं कहता हूं—इतना मैं वादा करता हूं। ◀

● संक्षिप्त संकलन *'आकुल' राजेन्द्र*
जबलपुर

भगवत्ता के क्षणों में

(भगवान श्री की—तुलसी श्याम, साधना-शिविर की प्रश्नोत्तर चर्चाओं से)

प्रश्न : प्रार्थना से सत्व कर्म का जन्म होता है ? क्या प्रार्थना से ऐसा संभव है।

भगवान श्री :

मेरी दृष्टि में प्रार्थना की नहीं जा सकती, प्रार्थना में हुआ जा सकता है, प्रार्थना प्रेम की अवस्था है। आप प्रेम में हो सकते हैं, प्रेम कर नहीं सकते। प्रेम भाव की एक दशा है। हम दूसरों को प्रेम करें। किया हुआ प्रेम मिथ्या है, प्रेम करेंगे तो क्या करेंगे ? प्रेम का दिखावा। सिर्फ प्रेम के शब्द बोलेंगे इससे स्पष्ट है कि हमारे अन्दर प्रेम नहीं है। साधारणत: हम प्रार्थना करते हैं, यह झूठी होगी, प्रभु कोई व्यक्ति है कि जो स्तुति, प्रशंसा से प्रसन्न हो सके ? आपने परमात्मा को कोई अहँकारी व्यक्ति मान लिया है क्या ? परमात्मा एक अनुभूति का नाम है। जब प्रेम एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति में होता है तो जो अनुभव में आता है वह प्रेम है। भीतर अनुभव की एक दशा है। आप प्रार्थना में हो सकते हैं। प्रेम में हो सकते हैं। मैं प्रार्थना करने के विरोध में हूं। किया हुआ प्रेम झूठा हो सकता है, प्रार्थना भी की हुई झूठी हो सकती है। प्रार्थना हमारी ही कामनाओं का रूप है। हमारी मांग का रूप है।

एक बौद्ध भिक्षु था, उसके पास कुछ न था। उसने एक ग्रन्थ का अनु-

वाद करने के लिए भिक्षा मांग मांग कर १०००/- रुपए इकट्ठे किए, इतने में देश में अकाल पड़ गया। उसने ग्रन्थ का काम रोक कर पीड़ित देशवासियों में वह रुपया बांट दिया, दूसरी बार फिर उसने भिक्षा मांग-मांगकर रुपए इकट्ठे किये। इस बार भूकम्प से लोग पीड़ित हो गए तो उसने वह रुपया उन लोगों की सेवा में लगा दिया। तीसरी बार जब फिर उसने रुपया इसी प्रकार मेहनत से इकट्ठा किया उस समय उसकी आयु ७० वर्ष की थी, तो तीसरी बार के रुपयों से उसने ग्रन्थ का अनुवाद करवा दिया। मरते समय किसी ने पूछा कि क्या यह ग्रन्थ का पहला संस्करण है। उसने कहा कि यह तो तीसरा संस्करण है, एक अकाल में गया, दूसरा भूकम्प में। और यही दो श्रेष्ठ अनुवाद थे, यह तीसरा तो यूं ही है।

जो प्रार्थना दिखाई पड़ती है वह असली नहीं है। जो अन्दर से निकले वही प्रार्थना है, उसे पता था कि प्रार्थना क्या है। कुछ बातें आप दोहरा कर पूरी करते हैं। प्रार्थना एक परिवर्तन है। पूरा चित्त प्रार्थना में रहे, वह फिर बाहर नहीं होता। वह सत्ता की तरह प्रार्थना करता है। उसका चलना, फिरना, बोलना सब प्रार्थना होगा, वह जहां होगा वहीं मन्दिर होगा। मैं प्रार्थना के पक्ष में हूं, मैं धर्म के पक्ष में हूं; पर चाहता हूं कि आडम्बर दूर हों। तथाकथित धर्म से दूर रहें, लोभी तथा कामी सब प्रार्थना करते हैं। उन्हें प्रार्थना से नहीं, मांग से मतलब है। लोभी दस बार मांगते हैं यदि मांग पूरी नहीं हुई ईश्वर से नाराज हो जाते हैं। प्रार्थना तो सत्य है। कई कहते हैं कि हम दिक्कत में थे। लेकिन प्रार्थना की तो दिक्कत से बाहर हो गए, तो जो प्रार्थना नहीं करते क्या वे दिक्कत में हैं ?

हम प्रार्थना करते हैं, प्रार्थना के लिए नहीं, कोई बच्चे के लिए करता है, कोई नौकरी के लिए। इसमें मूल्य चीज का है। क्षुद्र चीजों को मूल्यवान समझते हैं। जहां मांग है वहां लोभ है। मांगने की वृत्ति ही क्षुद्रता है। यह सवाल प्रार्थना में नहीं चाहिए। प्रेम मांगता नहीं, देता है। प्रार्थना के नाम से भगवान को हम सेवक बना लेते हैं। कहते हैं कि ईश्वर पतित-पावन है। लेकिन मानते हैं कि वह सेवक है, जब जो मांगेंगे वह दे देगा। प्रार्थना चित्त की गहरी दशा है। प्रेम क्या है ? वह प्रेम नहीं है जिसमें हम किसी में अपने को भुला सकते हैं, व्यक्ति चाहता है कि आप अपने को भुला पाएं। हम जिसे प्रेम करें वह सिर्फ हमारे कहने से ही उठे-बैठे। बस वह सिर्फ हमारा ही हो।

हम उस व्यक्ति के सारे प्रेम पर अधिकार करना चाहते हैं, कहीं वह किसी और के चक्कर में न पड़ जाए। हम सब भिखमंगे हैं, सब प्रेम मांगते हैं। आनन्द मांग रहे हैं, दोनों इस भ्रम में हैं कि एक दूसरे को प्रेम दे सकते हैं। यदि आप आनन्दित हों तो वहां प्रेम में समर्थ हैं, जहां दान है वहां आनन्द है। जहां आनन्द नहीं—आप प्रेम कर ही नहीं सकते। आनन्द की पूरिपूर्णता का नाम प्रेम है। वही प्रार्थना है, आनन्द की ज्योति का नाम प्रेम है। जो किसी से सम्बन्धित नहीं, वही प्रार्थना है। वही परमात्मा के प्रति प्रार्थना है, वह सबके प्रति प्रेम है। जो भी है सब के प्रति, बिना किसी आग्रह के प्रेम का जो दान है, वह प्रार्थना है।

जहां आप की श्वास जाए, वह सब प्रेमपूर्ण हो, वही प्रार्थना है। प्रार्थना एक बड़ी बात है, प्रार्थना प्रेम का अनन्त दान है।

एक मीठी कथा है। एक सूफी औरत राबिया ने कुरान से एक लकीर काट दी। उसके गुरु ने देखा तो कहा यह किसने काट दिया। राबिया ने कहा कि यहां लिखा था कि शैतान से घृणा करो, तो जब से मैं प्रार्थना में प्रवेश कर गई हूं, प्रेम में भेद करना नहीं जानती। मेरे सामने यदि शैतान आ जाए तो मैं पहचान नहीं पाऊंगी कि यह शैतान है। प्रेम ही अद्वैत है, उसका ही नाम प्रार्थना है।

प्रश्न : क्या शुभ कर्म—शुद्ध मन को जन्म दे सकते हैं ?

भगवान श्री :

यह भूल हजारों वर्षों से होती चली आ रही है। आप पौधा लगाएं, जड़ों में पानी दें, तो फूल आते हैं। यदि फूलों में पानी दें तो क्या जड़ों में पानी जाएगा ? कितना ही पानी दो-फूल सड़ जाएगा, कर्म पौधे के फूल हैं। यह विकास का अन्तिम चरण है। कर्म ठीक कर लेंगे तो मन कैसे ठीक होगा, हां दिया जला दें तो अंधकार चला जाएगा।

अन्धकार हटाया नहीं जा सकता। प्रकाश किया जाए तो अन्धकार विसर्जित हो जाएगा।

चीन के एक छोटे से गांव में एक लड़का हुआ। माता को अपनी बगिया ही अपना सुख लगती थी, वह जब छोटा सा था तो एक दिन माता ने कहा कि मैं बूढ़ी हूं—परेशान हूं कि मैं दूसरे गांव जाऊंगी तो बगीचे की देखभाल कौन करेगा ? बेटे ने कहा, माता तुम स्वस्थ हो जाओ, बगीचे की देखभाल मैं करूंगा। वापस आ कर माता देख कर दंग रह गई कि पौधे सूखे पड़े हैं, उसने बेटे से पूछा कि यह क्या बात है ? तो पुत्र ने कहा

कि मां मैं तो रोज फूलों को प्रेम करता था, उन्हें साफ करता था, धोता था। माता ने कहा कि बेटा फूलों के प्राण तो जड़ों में होते हैं। यदि उनकी जड़ों में पानी न दिया तो फूल तो जायेंगे ही—साथ ही पेड़ भी जायेंगे।

सत्य अहिंसा करुणा प्रेम दया मैत्री यह सब फूल हैं। इन्हें साधने से यह खराब हो जाएंगे।

धार्मिक होने का अर्थ नैतिक होना नहीं है, धार्मिक तो अंतस से होता है। अंतस को पकड़ना है। वहीं से शुरू होता है।

कुछ जरूरी बातें और—मुझे ख्याल आया कि ध्यान के सम्बन्ध में जल्दी है। एक बहन ने कहा कि आज ही ध्यान किया, लेकिन कुछ पता नहीं लगा। ध्यान क्या उतनी ही प्रतीक्षा से आता है? हजारों वर्ष बीत जाते हैं। उतनी ही उमर होगी। उतना ही समय लगेगा, छोटे २ पौधे जल्द लगाएं तो जल्द सूख भी जाते हैं। जितनी जड़ें गहरी होंगी वृक्ष उतना ही आकाश छूता है। जो जितनी गहराई में जाएगा उतना ही वह ऊंचा उठेगा। क्या १४ मिनिट ध्यान करने से काफी मूल्य चुका दिया? और कई काम करने में न मालूम कितना समय लग जाता है। सिर्फ ध्यान जल्द लगे, यदि कोई कहे कि ध्यान जल्द लग गया तो आश्चर्य होता है। मैं तो हैरान होता हूं कि जीवन को कैसे बच्चों जैसे लेते हैं। साधना तो धैर्य से होती है। उतनी ही प्रतीक्षा की जरूरत है।

एक वृक्ष के नीचे एक साधु बैठा है। माला जपता है। तिलक लगाता है। साधु होने में कोई शंका का कारण नहीं। कथा है कि नारद ने कहा कि बैकुण्ठ जा रहा हूं। भगवान से कुछ कहना है तो बताओ। साधु ने कहा कि जा रहे हो तो पूछ कर आना कि मुझे मोक्ष मिलने में कितना समय लगेगा। नारद हंसते हुए आगे बढ़े। कारण, यह पूछने का ख्याल ही बचकाना है, ऐसे कब तक चलेगा आखिर। नारद हंसते हैं, दूसरी तरफ एक नया फकीर आज ही साधु हुआ है। नारद ने उससे भी पूछा कि भगवान को कुछ कहना है। क्या भगवान को पूछता आऊं कि तुम्हें भी कब मोक्ष होना है?

नारद वापस लौटे तो पहले वाले से कहा कि तुम्हें तीन जन्मों में मोक्ष मिलेगा, साधु बोला, यह तो बड़ा अन्याय है। मेरी क्या भूल है। दूसरे साधु से कहा कि जितने वृक्ष में पत्ते हैं उतने जन्मों में मोक्ष मिलेगा। साधु नाचने लगा, कहने लगा इतने ही पत्ते न, तब तो पा ही गया। इस जमीन पर जितने वृक्ष हैं यदि उतने भी पत्ते हों, तो भी पा ही गया। और वह

मस्त होकर नाचने लगा, उसने उसी समय पा लिया। जिसे प्रेम है, उसे धैर्य होगा, जो समझता है, जिसमें गहराई है, वही धैर्य रखता है, वही तो मुक्ति है। विश्राम पूर्ण, आनन्द पूर्ण प्रेम में ही मुक्ति है। सारी साधना उसी प्रतीक्षा करने के लिए है। यह आपके हाथ का काम है, जो प्रतीक्षा करे वही बीज बोए।

शान्त मन के साथ जीवन के सत्य के लिए प्रतीक्षा करें। उसे ध्यान में रख कर चलें।

दूसरी चीज है स्वयं पर विश्वास। जिनमें थोड़ी श्रद्धा है, जो आत्महीन हैं, जो सोचता है कि क्या होगा, पहले ही निर्णय ले लेते हैं कि वह तो साधना कर सकते हैं, हम साधारण हैं। हमारा क्या है, हम कैसे कर सकते हैं, यह सब बेकार बातें हैं।

जिसके भीतर जीवन ज्योति जल रही है, वह साधारण कैसे हो सकता है। यदि आप आत्म विश्वास खो देंगे तो फिर कोई शक्ति नहीं हो सकती, यह आत्म विश्वास रखें कि कृष्ण, राम जैसे थे वैसा ही मैं भी हूं। मैं भी ऐसा बन सकता हूं। समुद्र की एक बूंद में खारापन है, तो सारा समुद्र खारा है। एक बात है कि हम करीब जाकर वापस आ जाते हैं, परमात्मा उपलब्ध हो जाता आगे बढ़ते तो?

एक आदमी को मालूम पड़ा कि इस पर्वत की जमीन में से सोना मिल सकता है, उसने सोचा कि मैं क्या छोटा-मोटा आदमी हूं! फिर उसने अपना सारा सामान बेच कर वह पहाड़ खरीद लिया, मशीनें ऊपर चढ़ाईं, कई मजदूर लगाए। कई जगह पर खुदाई की, लेकिन सोना नहीं निकला। आखीर में तंग आ कर वह पहाड़ बेचने को तैयार हो गया। लेकिन पहाड़ खरीदने का पागलपन कौन करता, लेकिन एक पागल निकल आया। उसने पहाड़ खरीद लिया, उसने व्यवस्था की। खोदने को बहुत जमीन पड़ी थी। आप हैरान होंगे कि अभी उसने एक फीट ही खोदा होगा कि सोना निकल आया। इसी प्रकार कई बार हम जाते हैं और लौट आते हैं। या तो न जाएं। कई बार सोचने लग जाते हैं कि रहने दो। इस प्रकार तो एक छोटा सा कुआं भी नहीं मिलेगा, ऐसा दृढ़ निश्चय करना है कि अगर शुरू करना है तो खोद कर ही देखेंगे। चूकेंगे नहीं।

धीरज रखें। आत्म विश्वास रखें, कुआं एक ही जगह खोदें। कई जगह से दो-दो फीट खोदने से कुआं कहीं भी नहीं बनेगा।

ऐसा कोई भी मनुष्य नहीं जिसमें परमात्मा न हो। यदि साहस हो,

लगन हो, श्रम हो, तो परमात्मा उपलब्ध किया जा सकता है। हमें आनन्द उपलब्ध हो, हम चूकते हैं तो कोई दूसरा जुम्मेवार नहीं है।

मेरी बातें बुरी लगती होंगी, उसकी नाराजगी को सहने को मुझे तैयार रहना ही होगा। मैं तो जगाता हूं। आप कहेंगे कि आप क्यों परेशान कर रहे हैं, हम सोये तो हैं; लेकिन चोट पहुंच सकती है। मेरी मंशा है कि चोट पहुंचे, एक आदमी ने जार्ज गुर्जियेफ को एक किताब भेंट की। मुख पृष्ठ पर लिखा था कि यह पुस्तक जार्ज गुर्जियेफ को भेंट है, जिसने मेरी नींद को भंग कर दिया। आप हैरान हों तो हरज नहीं। एक बार जाग कर फिर सो न जाना। परेशानी आती हो तो फिर देख कर सो न जाना। सत्य की एक झलक भी पहचान ली जाए तो फिर सोना, थोड़ी सी सुध आ जाए परमात्मा की तो दुनिया में रस नहीं आता है, संसार अपने आप छूटना शुरू हो जाता है। अनेक बातें आपके अनुकूल नहीं होंगी। क्रोध आया हो तो शिष्टता वश क्षमा याची हूं। आप ध्यान से सुनते हैं तो मैं आपका ऋणी हो जाता हूं। आपने परेशान होने की फुरसत निकाली, आप नहीं भी सुनते। क्राइस्ट को कहा जाता आगे न बोलना, नहीं तो पत्थर मारे जायेंगे। आप शान्ति से सुन लेते हैं, धन्य हुआ मैं कि आपने सुन लिया।

भक्त पूर्ण जब समाधि में उपलब्ध हुआ, तो बुद्ध ने कहा कि अब कहां जाओगे? पूर्ण ने एक गांव का नाम लिया, जहां लोग बहुत झगड़ालू थे। बुद्ध ने कहा वहां न जाओ, लोग गालियां देंगे। पूर्ण ने कहा कि कम से कम मारते तो नहीं। बुद्ध ने कहा यदि मारें तो फिर। पूर्ण ने कहा कि मारते ही हैं, मार तो नहीं डालते। बुद्ध ने कहा कि यदि मार ही डालें तो? पूर्ण ने कहा कि फिर तो वे कैसे भले लोग हैं कि जिस जीवन में अनेक भूल-चूक हो सकती हैं, ऐसे जीवन को ही खतम कर दिया। उन्हें सत्य से पीड़ा होती है इसलिए वह जीवन ही खतम कर दिया। मैं बहुत आनन्दित हुआ। आपने प्रेम से सुना। इसलिए अनुगृहीत हूं। मेरे प्रणाम स्वीकार करें।

● संकलन : *मा योग क्रांति*

भ
ग
व
त्ता
के आलोक से

(पूज्य भगवान श्री के अमृत सान्निध्य में जबलपुर नगर में पिछले जो २० वर्ष मेरे बीते, उनके मध्य जो समुद्र से अनमोल मोती चुने जा सके, ना-कुछ ही सही पर इतने कीमती हैं कि उन्हें प्रेमी मित्रों तक लाने का मोह न संवार सका। अतः 'युक्तांद' के माध्यम से इन्हें प्रस्तुत करने का भगवान ने दिव्य अवसर प्रदान किया है—तो इन पुष्पों को अर्पित कर रहा हूं : प्रभु श्री के दिव्य चरणों में—जिनकी सुवास दूर-दिगंत तक अपने से बिखरी रहेगी।

इन पुष्पों को आप तक संजो कर पहुंचा रहे हैं—अरविन्दकुमार। इस सम्बन्ध में एक विशेष बात कह दूं कि ये सारे पुष्प अपने में इतने जिंदगी के अद्‌भुत क्षणों में लिखे गए हैं कि उन क्षणों का आनन्द आप तक भी पहुंचेगा। ये संकलित अंश पूज्य भगवान की विविध अवसरों पर विभिन्न प्रेमी मित्रों से जो वार्त्तायें हुईं, उनमें से लिए गए हैं। —सं०)

जून '६३ का प्रथम पक्ष

१ भारतीय लोक मानस में दिव्य होने का ख्याल है। जब इस दिव्यता की खोज में व्यक्ति निकलता है—तो उसे सहज में कुछ चमत्कार घटित होते हैं या अन्य शक्तियां उपलब्ध होती हैं, और लोग इसीसे प्रभावित होते हैं—और साधक को इन चमत्कारों के होने से अपने आपको दिव्य मानने का भ्रम पैदा हो जाता है। भगवान श्री के निकट आकर पहिली बार साधक को आध्यात्मिक जीवन का रसास्वादन मिलता है और उसे चमत्कारी जीवन तथा आध्यात्मिक जीवन का स्पष्ट बोध होता है।

आए हुए प्रेमी मित्रों ने मानसिक तल पर घटी हुई घटनाओं का उल्लेख करते हुए भगवान श्री से पूछा : यह सब क्या है ?

भगवान ने मुसकाते हुए कहा : साधक को जानना है कि मन की बहुत सी सोई हुई शक्तियां हैं और उनके जागरण के प्रयोग यदि किए जायें तो अपने से आपको बहुत कुछ स्पष्ट होगा जिसका कि अभी आपको कोई पता नहीं है। मनुष्य के मस्तिष्क में अनेक सेल्स हैं जिनमें से सामान्यतः बहुत से कार्यशील नहीं होते हैं। उन सेल्स की अपनी कार्यक्षमता है—और जितने सेल्स मनुष्य के विकसित होते हैं उतना ही व्यक्ति श्रेष्ठ होता है। अभी वैज्ञानिकों ने इस पर बहुत शोध की और उनकी यह दृष्टि ठीक सिद्ध हुई। अल्बर्ट आइन्सटीन के सामान्य व्यक्ति से कुछ अधिक सेल्स कार्य करते थे—उसकी प्रतिभा का मूल रहस्य यही था। किसी भारतीय योगी के सेल्स का अध्ययन किया जाये तो भी यही नतीजा आने वाला है। विज्ञान ने अब सारा कुछ वैज्ञानिक आधारों पर कार्य करके यह स्पष्ट किया है कि मानसिक धरातल कहां तक है ?

साधक को जानना उपयोगी है कि क्या मानसिक है और क्या आध्यात्मिक है ? मानसिक धरातल तो सहज प्राकृतिक घटना है। उसमें कुछ भी दिव्य नहीं है। भारतीय मन में बहुत से विचार अनजाने में परमात्मा के चमत्कार के सम्बन्ध में बैठे हुए हैं और जब भी वे विचार साकार हो जाते हैं तो लगता है कि व्यक्ति चित्त परमात्म-सत्ता में हो आया। यह भ्रम है।

मन की सीमा है और परमात्मा तो शुद्धतम अस्तित्व है।

साधकों को यह दिशा देकर कि आप जो ध्यान के प्रयोग कर रहे हैं उससे मन शान्त होकर शून्य में खो जाएगा—और आनन्द-शान्ति का अस्तित्व झरने लगेगा, भगवान श्री ने साधकों को प्रेम-मय विदा दी।

●

२ युग की अपनी विशेषतायें होती हैं, कुछ सामयिक और कुछ शाश्वत होती हैं। जो सामयिक हैं—वे समय के साथ समाप्त होती हैं और जो शाश्वत होती हैं, वे समय में न होकर केवल होती हैं। कहें समय भी अस्तित्व की अनंतता का प्रतीक है तो उन्हें हम समय की अनंतता के साथ रख सकते हैं।

ऐसी ही विशेषताओं में भगवान श्री के वचन हैं। यह आज कहने जैसा नहीं लगता, पर जब मैंने ये वचन लिखे हैं, उस समय यह कहने जैसा

रहा है। उनमें शाश्वत निधि है—जो भी जान लेगा, वह अपने को सीमाओं के पार कर लेगा। जो भी देखा गया है, दर्शन किया है, वही ज्ञान का अंग होकर—अभिव्यक्त हुआ है।

प्रेमियों को जब भी भगवान से मिला है—चाहे वह आर्थिक समस्या हो, राजनैतिक-सामाजिक, शरीर-विज्ञान, साहित्य, धर्म, दर्शन, कला-काव्य, संगीत-शिल्प कोई भी आयाम रहा हो, वह अपने में अनूठा रहा है। कहें बेजोड़ है।

एक साधक भगवान से पूछता है 'ध्यान में विचार शून्यता का होना ही केवल आवश्यक है—या कुछ और भी ?'

भगवान श्री : विचार शून्यता तो अनेक स्थितियों में होती है और उसकी भिन्न-भिन्न पद्धतियां रही हैं। विचार शून्यता तो मूर्च्छित अवस्था में भी संभव है, गहरे दुख या सुख में भी संभव है—या गहरी चोट में भी संभव है। तल्लीनता में भी विचार शून्यता आती है लेकिन वह सम्मोहन ही है। इस तल्लीनता में भी खो जाने का सुख है—अपने को भूल जाने का। यह मन की सीमा है। एकाग्रता भी मन की सीमा है।

शून्यता का साधना के जीवन में अंतिम उपयोग है और जो शून्यता चित्त के विसर्जन पर आती है—वही साधक के लिए सिद्धता की अवस्था है।

विचार शून्यता घटित हो और परिपूर्ण जागृति हो, यह ध्यान के निरंतर प्रयोगों से ही संभव है। इसे आप अनुभूत कर पा रहे होंगे। अंतिम परिणति तो तब है जब ध्यान में बैठने की कोई आवश्यकता नहीं होती और केवल चैतन्य-बोध मात्र ही होता है।

इस गहरी अंतरदृष्टि को सुन कर साधकों ने आनंद की असीम लहरियों को अनुभूत किया और मन ही मन चिन्मय ऋषि को अंतस से प्रणाम करके विदा हुए।

●

२ आज का युग पूर्ण वैज्ञानिक है! सभी कुछ संदेह ग्रस्त हो गया है। इसका अपना लाभ हुआ है कि जीवन से अंधविश्वास तथा व्यर्थता मिट गई है। पर युग चेतना की जो सरल मनः स्थिति थी, वह खो गई है और इस कारण से सारा कुछ भीतर का टूट गया है। सरलता को खोकर व्यक्ति के जीवन में जो श्रेष्ठता थी—वह विलीन हो गई है। इतनी गति में व्यक्ति उलझ गया है कि वह बहुत शीघ्र परिणाम की फिकर करने लगा है और धैर्यता की जो चरम सीमायें थीं—वे टूट गई हैं। सरल और धैर्य

चित्त की मनः स्थिति का व्यक्ति साधना में जाता तो पूरे जीवन का जो भी श्रेष्ठतम था—वह निखर आता था। आज तो स्थिति उल्टी है। जो भी विकृत होता है वह पूरी तरह उभर आता है। और मजा यह है कि विकृति को ही हम जीवन का पहला और आखिरी मूल्य मानते हैं। इससे ही हमारी अंतस सृजन की क्षमता खो गई है।

पूछा भगवान से किसी प्रेमी ने 'क्या आज के युग का वैज्ञानिक होना बुरा है ?'

युग का वैज्ञानिक होना तो एक दम उचित है—लेकिन जो अंतस जीवन धारा के श्रेष्ठतम मूल्य विनष्ट हो गए हैं—उससे सारी कुछ भौतिक समृद्धि पाकर भी हम दरिद्र हो गए हैं। जरूरी है कि वैज्ञानिक आधारों पर सरलता और धैर्य चित्त की भूमि पर आध्यात्मिक जीवन के प्रयोग किए जायें तो अंतस जीवन की श्रेष्ठता घटित हो जाती है। वैज्ञानिकता और सरलता में होकर बिना किसी परिणाम के व्यक्ति भीतर उतरेगा—सब छोड़कर—तो बात पूरी हो जाती है। अनायास ही सारी कुछ घटना हो जाती है और जो भी पाने जैसा था, वह पा लिया जाता है।

अनेक दृष्टि से भगवान श्री ने मन की पकड़ को स्पष्ट किया और कहा कि मन संतुलित और स्वस्थ नहीं होता है। वह प्रत्येक दिशा में अति पर जाता है। सहजता और सरलता से वह व्यक्ति में कुछ भी घटने नहीं देता है। इससे ध्यान के प्रयोग से भीतर एक मनोभूमि बनती है—मन की जकड़ छूटती है और मन सहज हो आता है। इस सहजता में चित्त हो आता है तब अनायास कभी भीतर से सब। शांत हो आता है और जाना जाता है कि अपने से सब पूरा हो गया है। मन में जब कहीं पहुंचने का भाव नहीं होता है, केवल होना मात्र (जस्ट बीइंग) भर रह जाता है तो जिसे पाने के लिए सारी यात्रा थी, वह पूर्ण हो जाती है।

चेतना की इस स्थिति को आज का तथा कथित वैज्ञानिक चित्त पाने में असमर्थ है। हां, यह हुआ है कि विज्ञान की अंतिम निष्पत्ति चित्त को थका दे और व्यक्ति अपने अंतस में प्रवेश कर जाए। इस तरह विज्ञान की अंतिम परिणति व्यक्ति चेतना को अपने भीतर लौटा देती है।

पर, मैं जिस आयाम की बात कर रहा हूं—वह सीधी ही व्यक्ति के आंतरिक जीवन से संबंधित है। कबीर ने गाया 'समुंद समाना बुंद में' और यह तभी संभव है, जब व्यक्ति के सारे प्रयास छूट जाते हैं। पर प्रयास

छोड़ने की स्थिति तक आने के लिए भी सारे प्रयासों को करके गुजरना पड़ता है। 'ध्यान-योग' के निरन्तर प्रयोगों से यह संभव होगा कि आपके सभी प्रयास गिर जायें और भीतर कोई नया लोक खुल जाए।

भगवान श्री ने आगे समझाया : रवि बाबू ने एक गीत में गाया : एक गांव में एक रात्रि बड़ा महोत्सव किया—'रात के राजा' के आने की प्रतीक्षा थी। सारी पूजायें, अर्चनायें समाप्त हुईं, रात देर हुई—सब सो गए। तभी दरवाजे पर खट्खटाहट हुई, सोए व्यक्ति समझे हवा का झोका होगा। कुछ देर पश्चात प्रभात के फूटने के पूर्व फिर आवाज हुई, दरवाजा बन्द ही रहा, सोचा अब तो सुबह होने को है, अब कहां प्रभु आयेंगे। यह बड़ा बोध गीत है और मुझे प्रिय लगा। प्रतीक्षा थी तो प्रभु न था, प्रतीक्षा समाप्त हुई, प्रभु आया—पर वहां उसके लिए कोई स्थान न था, सब सोया हुआ था। यह गीत एक दिशा देता है।

कुछ न करें—केवल अपने को खुला छोड़ दें, ताकि जब प्रभु आए तो समा सके। उस समय हम बंद रहे तो प्रभु नहीं आ सकेगा। आपके हाथ में केवल इतना है कि आप अपने को छोड़ दें। खुले चित्त में प्रभु का आना अनायास होगा और जब अनायास प्रवेश होता है तो जाना जाता है कि इसके लिए सारे प्रयास व्यर्थ थे। मैं प्रभु को अपने प्रयास से लाना चाहता था—अपनी सीमा में बांधना चाहता था, यह भ्रम था। जिसे मैं अपनाकर संपत्ति की तरह रखना चाहता था, वह मात्र क्षुद्रता का स्वप्न था। पाया तो जाना कि वह विराट तो निरंतर था, केवल सीमाओं के कारण वह पृथक था, जैसे ही समस्त सीमाओं के पार हुआ कि जो निरंतर था, उसमें सहज हो आया।

● *अरविन्द कुमार*
जबलपुर

प्रस्तुत करते हैं !

★ जिंदगी शृंगार चुम्मसे ★

(विविध रंगों का अनुपम गीत-संग्रह)

गीतकार : *'आकुल'*

मूल्य : ५ रु.

अमृत-पर्व

मेरे प्रिय !

प्रेम । आपने पूछा है : "गृहस्थ के लिए ब्रह्मचर्य की क्या परिभाषा है ?"
ब्रह्मचर्य की परिभाषा तो एक ही है—ब्रह्म जैसी चर्या ।
वह गृहस्थ या अगृहस्थ के लिए भिन्न-भिन्न नहीं हो सकती है ।
ब्रह्मचर्य अत्यन्त विधायक अवस्था है ।
वह निषेधात्मक स्थिति नहीं है ।
लेकिन, सदा से ही उसे निषेधात्मक समझा जाता रहा है ।
इसीलिए व्यर्थ ही, बहुत सी भ्रांतियां पैदा हो गई हैं ।
ब्रह्मचर्य से समझा जाता रहा है : काम-निरोध ।
इसीलिए आपके मन में गृहस्थ अगृहस्थ के लिए ब्रह्मचर्य-भेद का भी सवाल उठा है ।
अगृही को तो हम पदेन ही ब्रह्मचारी मान लेते हैं, क्योंकि काम-तृप्ति का स्वाभाविक साधन उसके पास नहीं है ।
लेकिन काम (सेक्स) अस्वाभाविक साधनों से भी तृप्त हो लेता है ।
और काम के लिए अन्य की उपस्थिति भी अनिवार्य नहीं है ।
काम आत्म-काम भी बन जाता है ।
फिर काम के लिए ऐच्छिक-तृप्ति भी अनिवार्य नहीं है ।
वह अनैच्छिक तृप्ति का मार्ग भी खोज लेता है ।
जैसे, स्वप्नों में ।
इसलिए, काम-ऊर्जा के स्खलन के लिए गृही या अगृही में कोई भेद नहीं है ।
भेद है भी तो इतना ही कि गृही के विकृत होने की संभावना अगृही से कम है ।
ब्रह्मचर्य की निषेध-दृष्टि ने ब्रह्मचर्य की परमपावन धारणा को किसी भी भांति वीर्य रक्षण को अत्यन्त निम्न स्थिति प्रदान कर दी है ।
ऐसे ब्रह्मचर्य भी अत्यन्त कामुक बनकर रह गया है ।
मैं ऐसी स्थिति के आमूल विरोध में हूं ।
मेरी दृष्टि में ब्रह्मचर्य काम दमन नहीं है ।
दमन से चित्त कभी भी काम का अतिक्रमण नहीं कर पाता है ।

दमन तो एक दुष्ट-चक्र है, जिसे कि शुरू करना तो आसान लेकिन जिसके बाहर होना अति दुरूह है।
क्योंकि, जिसे हम दबाते हैं, वह और भी गहरे अर्थों में हमारे चित्त का हिस्सा हो जाता है।
दमन चेतन वृत्तियों को अचेतन बनाने की प्रक्रिया के अतिरिक्त और कुछ भी नहीं है।
और इसलिए दमन आधारित ब्रह्मचर्य मानसिक व्यभिचार मात्र बनकर रह जाता है।
दमन नहीं, चाहिए अतिक्रमण।
काम ऊर्जा को दबाना नहीं है, वरन् उसे और नये आयामों में गतिमान करना है।
काम ऊर्जा अमूल्य सम्पदा है।
उससे संघर्ष नहीं करना है।
वरन् उसे सृजनात्मक बनाना है।
संघर्ष से आत्म-विग्रह होता है।
क्योंकि, हम और वह ऊर्जा दो नहीं हैं।
वह ऊर्जा ही हम हैं।
हम ही वह ऊर्जा हैं।
काम भी राम है।
ध्यान के मार्ग से काम के राम होने का दर्शन उपलब्ध होना शुरू होता है।
इसलिए, मेरे लिए प्राथमिक रूप से ब्रह्मचर्य ध्यान से प्रारम्भ होता है।
ध्यान अर्थात आत्मरमण।
स्वयं में होना।
मौन अर्थात पर-रमण।
दूसरे में होना।
फिर यह होना चाहे वास्तविक हो, चाहे काल्पनिक।
ध्यान का रस पर-रमण से मुक्त करता है।
आत्म-रमण का आनंद पर-रमण के आनंद को एकदम फीका और अर्थहीन बना देता है।
और इस भांति काम-ऊर्जा स्वयं के आयाम में प्रवाहित होने लगती है।
काम-ऊर्जा के प्रवाह की दो दिशायें हैं—यौन और योग।

यौन बहिर्गामी है ।
योग अंतर्गामी है ।
बहिर्गामी को दबाना नहीं है ।
अंतर्गामी को खोलना है ।
क्योंकि, बहिर्गामी को दबाने से अंतर्गामी नहीं खुलता है ।
विपरीत बहिर्गामी ही विकृत होकर प्रवाहित होने लगता है ।
लेकिन, अंतर्गामी के खुलने से बहिर्गामी अनायास ही तिरोहित हो जाता है ।
जीवन-ऊर्जा के अंतर्गमन के इस अनुभव का नाम ही ब्रह्मचर्य है ।
निश्चय ही इस अंतर्यात्रा के साथ ही सारी चर्या बदल जाती है ।
वह अहं-केन्द्रित न होकर ब्रह्म-केन्द्रित हो जाती है ।
यौन अहं-चर्य है ।
योग ब्रह्मचर्य है ।
यौन भी मिलन है—पर से ।
योग भी मिलन है—स्व से ।
पर माया है ।
स्व ब्रह्म है ।
पर भ्रम है ।
स्व सत्य है ।

रजनीश के प्रणाम
१० । ६ । ७०

[श्री हरीकिशनदास अग्रवाल, बम्बई को लिखा गया एक पत्र]

मेरे प्रिय,
प्रेम ! आपका पत्र और साहित्य मुझे यथा समय मिल गया था ।
व्यक्ति को बचाने से बड़ी आज कोई और दूसरी समस्या नहीं है ।
क्योंकि, व्यक्ति है तभी तक मनुष्य है ।
व्यक्ति मिटा कि फिर जो कहानी होगी वह मनुष्य की नहीं, यंत्र की होगी ।
व्यक्तित्व ही आत्मा है ।
लेकिन, समाज और राज्य सदा से ही व्यक्ति से भयभीत हैं ।
क्योंकि, व्यक्ति की परम स्वतंत्रता अंततः राज्य का अंत बन सकती है ।

इसलिये, राज्य उसके पूर्व ही व्यक्ति को मिटा डालना चाहता है।
फिर उस हत्या का नाम चाहे फासिज्म हो, चाहे कम्युनिज्म, इससे कोई भेद नहीं पड़ता है।
व्यक्ति को नहीं, मिटाना है, व्यक्ति की परतंत्रताओं को।
लेकिन, परतंत्रतायें बढ़ रही हैं, और व्यक्ति मर रहा है।
और व्यक्ति अपने ही आत्मघात के लिए तैयार किया जा रहा है, क्योंकि परतंत्रताओं ने स्वतंत्रता के वस्त्र पहन रखे हैं।
परतंत्रताओं को स्वतंत्रता के वस्त्र पहनाना अति कठिन कार्य है; लेकिन समानता के नाम पर यह चमत्कार घटित हो गया है।
इसलिए समानता के भ्रांतजाल में मनुष्य को सजग करना अति आवश्यक हो गया है।
समानता असंभव है। क्योंकि अस्वाभाविक है।
व्यक्ति असमान हैं।
इसलिए, प्रत्येक को असमान होने की सुविधा और स्वतंत्रता आवश्यक है।
समानता के द्वार से परतंत्रता प्रवेश कर जाती है लेकिन समानता मोहक शब्द है।
और मोहक शब्दों के लिए मनुष्य सदा ही बलि दिया जाता रहा है।
लेकिन बलि के पुरोहितों के हाथ में इतनी शक्ति कभी भी न थी, जितनी आज है।
न काशी में थी, न मक्का में, न रोम में।
जितनी आज मास्को में है, पीकिंग में है, और कल दिल्ली में भी हो सकती है।
इसलिए एक अत्यन्त निर्णायक संघर्ष निकट है।
और हम जितनी जल्दी चेतें उतना ही शुभ है।
वहां सबको मेरे प्रणाम कहें।

रजनीश के प्रणाम
९।६।७०

[श्री एम० आर० पई, बंबई को लिखा गया एक पत्र]

पत्र-पत्रिकाएं

	प्रकाशन स्थल	वार्षिक मूल्य
१ युक्रांद (हिन्दी मासिक)	C/o युक्रांद प्रकाशन, ७९०, राइट-टाउन, जबलपुर	१२-००
२ आनंदिनी (हिन्दी-मासिक)	C/o सुप्रीम वूलन मिल्स, इंडस्ट्रियल स्टेट, लुधियाना	१०-००
३ योग दीप (मराठी पाक्षिक)	C/o जीवन जागृति केन्द्र, १०१, टिम्बर मार्केट, पूना	१०-००
४ SANNYAS (English Bi-Monthly)	C/o Selprint, A. Z.,Industrial Area, Fergusson Road, Lower Parel, BOMBAY : 13	१८-००
५ "रजनीश-पत्रिका" (गुजराती मासिक)	जीवन-जागृति-केन्द्र, भवानी चेम्बर्स, आश्रम रोड, अहमदाबाद–९	१०-००

साहित्य प्राप्ति हेतु संपर्क स्थल :

(१) ईश्वर-समर्पण, जीवन जागृति केन्द्र, ३१, इजरायल मोहल्ला, भगवान भुवन, मस्जिद बंदर रोड, बम्बई ९ : फोन : ३२७००१

(२) स्वामी सत्य बोधि सत्व, जीवन जागृति केन्द्र, भवानी चेम्बर्स, आश्रम रोड, अहमदाबाद-९, फोन : ७६५७३

(३) स्वामी अमृत बोधि सत्व, जीवन जागृति केन्द्र, १०१, टिम्बर मार्केट, पूना-१, फोन : २४१४८

(४) स्वामी आनन्द गौतम, जीवन जागृति केन्द्र, ४१६, महात्मा गांधी मार्ग, इन्दौर-१

(५) अरविन्द कुमार, जीवन जागृति केन्द्र, ७८१, राइट-टाउन, जबलपुर फोन : २९५७

(६) स्वामी दयाल भारती, जीवन जागृति केन्द्र, कबूला पुल, सागर

(७) स्वामी आनन्द वेदांत, घंटाघर, नीमच (म. प्र.)

(८) स्वामी निकलंक भारती, विजय गृह निर्माण सामग्री भंडार, गाडरवारा

(९) मोतीलाल बनारसीदास, बुक-सेलर्स एवं पब्लिशर्स बंगलो रोड, जवाहर नगर, दिल्ली-७

(१०) मोतीलाल बनारसीदास अशोक राज पथ, पटना-४

भगवान रजनीश का दिव्य आवाहन

★ माउण्ट आबू साधना-शिविर ★

दिनांक ११ जनवरी, ७४ की संध्या से १६ जनवरी, ७४ की संध्या तक

(भगवान रजनीश के भगवत् मार्ग निर्देशन में)

—: अंग्रेजी भाषा में :—

प्रवचन विषय : *अक्षय उपनिषद्*

कार्यक्रम : सुबह एवं रात्रि प्रवचन
सुबह सक्रिय ध्यान
मध्याह्न : कीर्त्तन ध्यान
रात्रि : त्राटक ध्यान

प्रवेश शुल्क : १००/- रु० स्थल : *बीकानेर पैलेस होटल*

(इस शिविर में केवल २५० साधकों को ही प्रवेश मिलेगा)

अन्य विस्तृत जानकारी हेतु सम्पर्क करें :

जीवन जागृति केन्द्र
भवानी चेम्बर्स, आश्रम रोड,
अहमदाबाद—६
फोन : ७७५७३